ज्ञानामृत

जुलाई, 1987 वर्ष 23 ❋ अंक 1 मूल्य 1.75

माउंट आबू—ओमशांति भवन में 'बाल महोत्सव' का उद्घाटन दृश्य। राजस्थान के राज्यपाल भ्राता बसंत कुमार पाटिल, ब्र.कु. दादी प्रकाशमणी जी मुख्य प्रशासिका ब्र.कु.ई. वि. विद्यालय, ब्र.कु. भ्राता जगदीश जी, सिरोही के जिलाधीश भ्राता रोहित आर. ब्राण्डन दीप प्रज्ज्वलित करते हुए।

बैंगलोर—राजयोगिनी दादी चन्द्रमणि जी, संयुक्त मुख्य प्रशासिका ब्र.कु.ई.वि. विद्यालय भिन्न-भिन्न मुख्य समाचारपत्रों के सम्पादकों तथा रिपोर्टरों के ग्रुप के साथ।

करीमनगर—स्वर्णिम युग मेले का उद्घाटन करती हुई दादी प्रकाशमणी जी।

कृष्णागिरि—नये भवन के उद्घाटन तथा 'सर्व के सहयोग से सुखमय संसा
कार्यक्रम में ब्र.कु. आशा प्रवचन करती हुई। मंच पर दादी चन्द्रमणि जी,
स्वामी विद्यानंद जी तथा डॉ. समरसम विराजमान हैं।

आबू पर्वत—राजयोग शिविर में १०० डॉक्टरों ने भाग लिया। डॉक्टरों का ग्रुप राजयोगिनी दादी मनोहर इंद्रा, ब्र.कु. शीलू, ब्र.कु. शांशे तथा अन्य बहिनों के साथ।

बेलगाम—कटकोल गांव में देवदासियों के उत्थान के लिए सिलाई कक्षाएं आरम्भ की गई। इस अवसर पर भ्राता आर. शंकरप्पा, डिवीजनल कमिश्नर अपने विचार प्रकट करते हुए।

सिरोपीट (आ.प्र.)—ब्र.कु. दादी प्रकाशमणी जी के शहर में आगमन पर उनका हार्दिक स्वागत किया गया।

राजस्थान के राज्यपाल बरसंत राव जी पाटिल को राहुरी सेवाकेंद्र की ओर से ईश्वरीय सौगात भेंट देती हुई ब्र.कु. सुरेखा तथा शिवा जी भाई।

आबू पर्वत—ईश्वरीय विश्वविद्यालय द्वारा मनाए जा रहे एकता वर्ष से सम्बंधित 'हम सब एक हैं' का नारा लगाते हुए छोटे-छोटे बच्चे कार्यक्रम प्रस्तुत कर रहे हैं।

माउंट आबू—भिन्न-भिन्न प्रांत से आये हुए बच्चे—जिन्होंने वक्तृत्व स्पर्धा में भाग लिया। अध्यक्ष के रूप में विश्वविद्यालय की मुख्य प्रशासिका दादी प्रकाशमणी जी उपस्थित हैं।

Regd. No. 10563/65-D, (E)—70

माउंट आबू-बाल महोत्सव के अंतर्गत हुई वकृत्व स्पर्धा में विजेता बच्चों को पुरस्कार देती हुई दादी प्रकाशमणी जी।

माउंट आबू—अखिल भारतीय बाल युवा आध्यात्मिक शिविर का उद्घाटन करने के पश्चात् राजस्थान के राज्य पाल महामहिम वसंत राव दादा पाटिल सभी बच्चों को सम्बोधित करते हुए। साथ में हैं मुख्य प्रशासिका दादी प्रकाशमणी जी, सिरोही के जिलाधीश महो•य भ्राता रोहित आर. ब्राण्डन। बायें तरफ विद्यालय के मुख्य प्रवक्ता ब्रह्माकुमार जगदीश चंद्र जी विराजमान हैं।

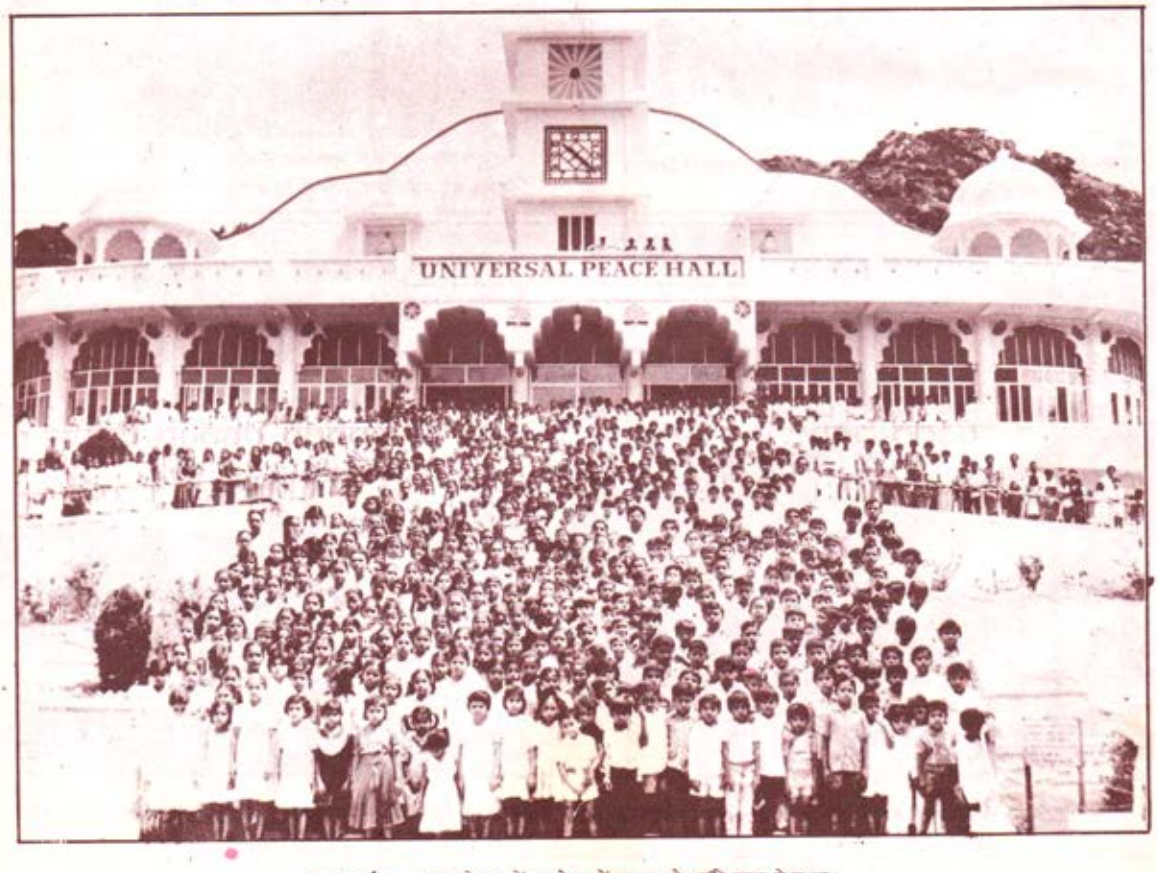

आबू पर्वत—बाल महोत्सव में पधारे बच्चों का ग्रुप ओमशांति भवन के सामने।

अमृत-सूची

१.	लक्ष्य की प्राप्ति का मार्ग	... १
२.	परमपिता परमात्मा के विषय में एक वैज्ञानिक के उत्तरों की समीक्षा	... २
३.	करना है जो भी कर ले, यह वक्त जा रहा है ?	... ४
४.	महिमा सुलाती है, ग्लानि जगाती है	... ५
५.	प्रभु आपको क्या प्रिय है ?	... ८
६.	मुक्ति के बाद क्या ?	... ११
७.	गरीब के सात रुपये	... १३
८.	प्रसन्नता की जननी—निःस्वार्थ सेवा	... १५
९.	पवित्र जीवन के लिए ईश्वरीय प्रेरणाएं	... १६
१०.	गीत	... १७
११.	हमारे मित्र .	... १८
१२.	ओ तस्वीर बनाने वाले	... १९
१३.	परमात्मा की स्मृति से मोह की निवृत्ति	... २०
१४.	सहज राजयोग के अभ्यास की विधि	... २१
१५.	अनोखा अखिल भारतीय बाल युवा आध्यात्मिक शिविर	... २३
१६.	कहीं आप निराशा के शिकार तो नहीं !	... २५
१७.	क्रोध को विदाई	... २८
१८.	आध्यात्मिक सेवा समाचार	... २९

सूचना

ज्ञानामृत का २३वें वर्ष का पहला अंक आप के पास पहुंच चुका है। हम पहले भी कई बार लिख चुके हैं कि सेवाकेंद्र के **ज्ञानामृत** के सदस्यों की संख्या शीघ्र-अति-शीघ्र भेजें, साथ ही शुल्क भी भेज देवें। परंतु अभी तक भी कई सेवाकेंद्रों से सूचना प्राप्त नहीं हुई। कृपया इस सूचना को पढ़ते ही संख्या की सूचना भेज देवें।

ज्ञानामृत का वार्षिक शुल्क	२० रुपये
अर्द्धवार्षिक	११ रुपये
आजीवन सदस्यता	२५० रुपये

शुल्क केवल 'ज्ञानामृत', 'GYAN AMRIT' के नाम भेजें।

व्यवस्थापक ज्ञानामृत,
बी-९/१९ कृष्णानगर, देहली - ११० ०५१

लक्ष्य की प्राप्ति का मार्ग

मनुष्य-जीवन का लक्ष्य मुक्ति और जीवनमुक्ति की प्राप्ति है। परंतु बहुत-से मनुष्य जब उस मार्ग पर चलने लगते हैं तो इस संसार रूपी बगीचे में अनेक प्रकार के फलों से आकर्षित हो जाते हैं और रास्ते में ही भटक जाते हैं। कोई मनुष्य तो देह के सम्बंधियों में मोह और ममता के कारण उनकी ओर खिचाव का अनुभव करता है और अनाड़ी की तरह इस खट्टे अनार को चखने में आनंद मानकर वहीं रुक जाता है। दूसरा कोई विषय-वासनाओं और पदार्थों को आम की तरह रसीला मानकर उन तक पहुंचने और उन्हें भोगने में ही सारा समय लगा रहता है और उन्हें खट्टा पाकर भी उसका दिल खट्टा नहीं होता। अन्य कोई मान और शान अथवा पद और यश को ही मीठी खजूर समझकर उस पर ही चढ़ने और उसे चखने की चाव में आयु व्यतीत कर देता है। कोई तो इनकी ओर ध्यान न देकर दूसरी ओर मुड़ जाता है; वह धन को अंगूरों की बेल की तरह मीठा और दिनोंदिन बढ़ने वाला जानकर, उनसे तृप्त होने की कोशिश करता है और कोई तो जीवन में ऐश और आराम को ही मुख्यता देकर मानो शीघ्र मुरझा जाने वाले फूलों की ओर कदम उठाता है। प्रकृति के प्रति आकर्षण, ममता और आसक्ति के इन सूक्ष्म डोरों में बंधे हुए ये भोले मनुष्य पथ-भ्रष्ट हो जाते हैं और अंत पश्चाताप् ही करते हैं; वे परमप्रिय परमपिता परमात्मा की ओर नहीं बढ़ते और इसलिए मुक्ति और जीवनमुक्ति के सुख की प्राप्ति नहीं कर सकते।

परमपिता परमात्मा शिव ने अवतरित होकर वैकुंठ का और मुक्तिधाम का साक्षात्कार कराया है और यह भी समझाया है कि अब इस सृष्टि का महाविनाश होने वाला है। अब वह सहज ईश्वरीय-ज्ञान और सहज राजयोग की शिक्षा दे रहे हैं जिनसे मनुष्य को जीवन में सच्चा और स्थाई आत्मिक सुख मिल रहा है और मनुष्यात्मा इस संसार में रहते हुए भी इन विषय-पदार्थों में आसक्ति को छोड़कर मुक्तिधाम और वैकुंठ में २५०० वर्षों तक निरंतर सुख प्राप्त करने के योग्य बन रही है। ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय उसी ईश्वरीय-ज्ञान और सहज राजयोग की शिक्षा दे रहा है जिससे नर-नारी को इस जीवन में भी आत्मिक सुख प्राप्त हो और भविष्य में भी मुक्ति और जीवनमुक्ति की प्राप्ति हो। □

परमपिता परमात्मा के विषय में एक वैज्ञानिक के उत्तरों की समीक्षा

"दैनिक हिंदुस्तान टाइम्स" के ३१ मई के रविवारीय संस्करण में भारत एवं विश्व के प्रसिद्ध वैज्ञानिक सुब्रह्मण्यम चंद्रशेखर की एक भेंटवार्ता प्रकाशित हुई थी। उसका शीर्षक था—"मैं आस्तिक क्यों नहीं?" हिंदुस्तान टाइम्स के लिए चंद्रशेखर जी से भेंट की थी संजय कुमार और पी.जी. कृष्णन ने। चूंकि चंद्रशेखर एक उच्चकोटि के वैज्ञानिक माने जाते हैं और उनके शोध कार्य के लिए उन्हें सन् १९८३ में भौतिकी (Physics) में नोबल पुरस्कार में भी भाग प्राप्त हो चुका है, इसलिए परमात्मा एवं धर्म में आस्था से सम्बंधित उनसे किए गए प्रश्नों का अपना महत्व है। इसीलिए हम यहां उनकी चर्चा करना चाहते हैं।

उनसे किये गये प्रश्न और उन द्वारा दिये गये उत्तर

भेंटकर्त्ताओं ने उनसे पहला प्रश्न यह किया: "क्या परमात्मा के अस्तित्व में आपका विश्वास है?" इसके उत्तर में चंद्रशेखर महोदय ने कहा—"मैं स्वयं को आस्तिक (Believer) नहीं मानता। मुझे 'नास्तिक' कहा जाए तो उपयुक्त होगा।"

इस पर उनसे पूछा गया—"आप नास्तिक क्यों हैं?"

इस प्रश्न के उत्तर में चंद्रशेखर जी ने कहा—"परमात्मा को मानना या न मानना **विश्वास की बातें हैं**। परंतु मैं समझता हूं कि प्रकृति का जगत, जिसमें हम रहते हैं और जो हम यहां अनुभव करते हैं, जगत से पहले किसी कर्ता की चर्चा करने की आवश्यकता नहीं है। **हम तो विकासवाद (Evolution) में विश्वास रखते हैं** और यह मानते हैं कि 'मनुष्य' उस विकास का ही परिणाम है। चूंकि मैं एक वैज्ञानिक हूं, मैं इस बाह्य जगत की व्याख्या तर्क-सम्मत रीति से करना ठीक समझता हूं।"

इसके बाद उनसे पूछा गया—"धर्म के प्रति आपका जो दृष्टिकोण है, क्या आप उसकी व्याख्या करेंगे? विज्ञान और धर्म में जो सम्बंध है, उसके विषय में आपके क्या विचार हैं"

इसके उत्तर में उन्होंने कहा—"मैंने धर्म के विषय में इतना अध्ययन नहीं किया कि मैं उसके बारे में अपने कुछ विचार प्रस्तुत कर सकूं। परंतु कुछ वर्ष हुए, मैंने कुछ समय निकालकर गीता का अध्ययन किया था। लेकिन मैं उससे कुछ प्रभावित नहीं हुआ। मुझे लगा कि इसमें कुछ भी गहराई नहीं है। हर प्रश्न के उत्तर में गीता में हर बार यही कहा गया है—तुम मुझमें विश्वास करो। इस प्रकार गीता आदेशात्मक है। मुझे यह समझ में नहीं आता कि लोग इसे धार्मिक दृष्टि से एक महान या मूल्यवान ग्रंथ क्यों मानते हैं। एक युद्ध के इतिहास के ग्रंथ को दृष्टि में रखकर तो यह रुचिकर है और इसका वह प्रसंग भी अद्भुत है। परंतु मेरे विचार में इस ग्रंथ से कुछ विशेष शांति या तुष्टि प्राप्त नहीं होती। मैं इसमें बताये गए सिद्धांतों को नहीं मान सकता। कविता-दृष्टि से इसकी प्रशंसा की जा सकती है। परंतु मैं यह अवश्य कहूंगा कि मैंने इसका कोई विशेष अध्ययन नहीं किया। मेरे विज्ञान-विषयक कार्य से इसका कोई सम्बंध भी नहीं है।"

उनसे अगला प्रश्न यह किया गया—"आइंस्टाइन ने तो यह कहा था कि विज्ञान के बिना धर्म आधा है और धर्म के बिना विज्ञान लंगड़ा है।"

चंद्रशेखर जी ने इसके उत्तर में कहा—"इसके विषय में अपने-अपने विचार हो सकते हैं। परंतु मेरे विचार में निरंतर यही कहते जाना कि—"मुझमें विश्वास करो, मुझमें विश्वास करो, मुझमें विश्वास करो... हम मानवों की समझ के अनुसार तो यह बिल्कुल ही अभिमानात्मक और अधिकारात्मक (Authoritarian) विचार है।

इसके बाद उनसे यह प्रश्न किया गया—"क्या आप महसूस करते हैं कि (गीता में) श्रीकृष्ण की शिक्षाएं या उपदेश अभिमानात्मक (Egocentric) हैं?

इसके उत्तर में चंद्रशेखर महोदय ने कहा—"अगर मैं आइंस्टाइन के सापेक्षवाद (Theory of Relativity) की प्रशंसा करता हूं तो उसका यह अर्थ नहीं है कि मैं उसके (धर्म और विज्ञान से सम्बंधित) इस वाक्य को भी सत्य मानता हूं। लोग मुझसे कई बार पूछते हैं कि क्या मैं आइंस्टाइन की प्रशंसा करता हूं? इसके उत्तर में मैं उन्हें सदा यही कहता हूं कि मैं उसके सापेक्षवाद के सिद्धांत की प्रशंसा करता हूं।"

इसी प्रसंग में उनसे एक प्रश्न और किया गया—"परंतु क्या आप यह नहीं मानते कि किसी बात को कहने वाला यदि

अधिकारी होता है तो उसे स्वीकार किये जाने में अधिकारीपन का भी महत्व होता है ?

इसका उत्तर देते हुए चंद्रशेखर जी ने कहा—''यह हरेक के अपने दृष्टिकोण पर निर्भर करता है । हर कोई न्यूटन द्वारा लिखी गयी उनकी पुस्तक 'प्रिंसिपिया' (Principia) में से उदाहरण देता है परंतु वास्तव में कुछ थोड़े ही लोगों ने उसे पढ़ा होता है । यद्यपि आज अनेक भाषाओं में उसका अनुवाद हो चुका है और उसमें दी हुई बातों में से कोई बात गलत हो—ऐसी भी सम्भावना असाधारण ही होगी । तो भी इसका यह अर्थ नहीं है कि मैंने उसके हर अंश को पढ़ा है और उसमें लिखी बातों को मानने के लिए मेरे अपने कोई प्रमाण हैं । परंतु वैज्ञानिक होने के नाते तो हम किसी बात को तभी ही सत्य मानते हैं जब हम उसके हर अंश को स्वयं (जांच कर) सप्रमाण मानते हैं।''

भेंटवार्ता से प्राप्त होने वाले कुछ निष्कर्ष

ऊपर हमने जो भेंटवार्ता उद्धृत की है, उससे कई निष्कर्ष हमारे सामने आते हैं । पहली बात तो यह है कि चंद्रशेखर महोदय यह समझते हैं कि धर्म केवल **विश्वास ही का विषय** है, उसमें तर्क, विवेक या वैज्ञानिक पद्धति का कोई स्थान नहीं है या अगर है तो बहुत ही कम है । उनकी यह मान्यता किसी हद तक ठीक भी है क्योंकि आज संसार में जो प्रचलित मत हैं, उनमें विश्वास अथवा 'श्रद्धा' (अंध-श्रद्धा) ही का मुख्य स्थान है । कई मत-सम्प्रदायों के लोग एक ओर तो कहते हैं कि आत्मा निर्लेप्य है, दूसरी ओर वे किसी दुराचारी के बारे में कहते हैं कि वह 'पापात्मा' है । एक ओर वे मानते हैं कि आत्मा ही परमात्मा है, दूसरी ओर कहते हैं कि परमात्मा 'परमपिता' है; वह सृष्टि के रचयिता हैं । परमात्मा के अस्तित्व को सिद्ध करने के लिए वे मुख्य प्रमाण ही यह देते हैं कि 'इस अद्भुत एवं नियम-युक्त सृष्टि का कोई सर्वज्ञ एवं सर्वसमर्थ रचयिता है', परंतु साथ ही साथ वे कह देते हैं कि 'जगत तो बना ही नहीं है' अथवा 'यह तो स्वप्रमाण है।' इधर वे कहते हैं कि 'परमात्मा को जानो', उधर यह भी कहते हैं कि 'परमात्मा को तो जाना ही नहीं जा सकता', 'वह तो अपरम्पार, अगम-अगोचर और अनिर्वचनीय है।' इन सभी परस्पर-विरोधी बातों से वैज्ञानिक-बुद्धि व्यक्ति तो यही मानेगा कि ये धर्म–विश्वासी लोग केवल विश्वास ही पर टिके हुए हैं ।

दूसरी बात जो इससे सम्बंधित है, वह यह कि धार्मिक आस्था वाले लोग परमात्मा के बारे में यही कहते हैं कि वह सृष्टि का रचयिता, नियामक, कर्त्ता-धर्त्ता और सर्वेसर्वा है । पत्ता-पत्ता भी उसकी आज्ञा से हिलता है । परंतु वैज्ञानिक लोग यह देखते हैं कि प्रकृति के अपने गुण हैं और वह उनके अनुसार निश्चित नियमों से परिवर्तन होती है और क्रियाशील है; उसको नियंत्रित करने वाला कोई अलग 'सर्वज्ञ' नहीं है । अतः बहुत से धर्मावलम्बी लोग परमात्मा का अस्तित्व सिद्ध करने के लिए जो तर्क देते हैं कि वह इस अद्भुत सृष्टि का नियन्ता और रचयिता है, वही तर्क परमात्मा के अस्तित्व के विरुद्ध जाता है । इसी कारण वैज्ञानिक लोग समझते हैं कि परमात्मा का कोई अस्तित्व नहीं है।

तीसरी बात यह है कि गीता के बारे में यह जो कह दिया गया है कि श्रीकृष्ण ही गीता के प्रवक्ता थे, उससे वैज्ञानिक-बुद्धि के कई लोग समझते हैं कि श्रीकृष्ण ने मिथ्याभिमान से कहा कि—'तुम मुझमें विश्वास करो', 'तुम मेरी शरण लो' आदि । यदि संसार के लोगों को यह मालूम होता कि गीता-ज्ञान जरा-मरण-आधीन, किसी मनुष्य द्वारा दिया हुआ नहीं है बल्कि यह सभी आत्माओं के अशरीरी (Incorporeal) परमपिता परमात्मा ने प्रजापिता ब्रह्मा के मानवी तन में संनिवेश करके दिया था और कि परमात्मा तो हैं ही ईश्वरीय ज्ञान में सम्पूर्ण अधिकारी (Authority), तो उनके इन महावाक्यों को सुनकर मनुष्य परमात्मा से योग-युक्त होने का पुरुषार्थ करते।

चौथी बात यह है कि वैज्ञानिक लोग प्रायः विकासवाद ही को सत्य माने बैठे हैं । उन्हें यह ज्ञात ही नहीं है कि यह सृष्टि तो अनादि और अविनाशी है और परमात्मा के विषय में जिस 'रचयिता' शब्द का प्रयोग किया जाता है उसका वह अर्थ नहीं है, तो वे सत्यता को जानने का यत्न करते हैं।

कैसी विचित्र बात है कि एक ओर तो वैज्ञानिक लोग कहते हैं 'कि हम हरेक बात का परीक्षण करके और उसके प्रमाण जानकर बाद ही में उसे मानते हैं' और दूसरी ओर वे विकासवाद का कोई परीक्षण प्रयोगशाला में न हो सकने के बावजूद, कोई साक्ष्य (Evidence) भी अकाट्य न होने के बावजूद वे उसे मानते चले आते हैं जबकि हर आए दिन उस वाद के विरुद्ध प्रमाण या उसके विरोधक साक्ष्य सामने आते रहते हैं ।

आश्चर्य तो यह है कि ''वैज्ञानिक स्वयं को तो जानते नहीं परमपिता परमात्मा को भी नहीं जानते और इस विषय के जो अधिकारी हैं, उनमें वे विश्वास भी नहीं करना चाहते । सारी खगोल भौतिकी (Astrophysics) को जान लेने के बाद भी स्वयं को न जाना और परमपिता परमात्मा को भी न जाना तो जीवन नईया का क्या होगा ? यह तो एक खेवट और वैज्ञानिक में जो संवाद हुआ था जिस में खेवट ने पूछा था—वैज्ञानिक

महोदय, क्या आप तैरना जानते हैं ? यदि नहीं जानते तो अब आपका सारा ही जीवन गया !''—वैसा ही किस्सा है।

अच्छा होगा कि वैज्ञानिक लोग अब थोड़ा-सा समय निकालकर विवेक-सम्मत इस ईश्वरीय ज्ञान को सुनें, उसका अपने जीवन में अनुभव करें।

—जगदीश

करना है जो भी कर ले, यह वक्त जा रहा है!

परमपिता परमात्मा जब इस मनुष्य-सृष्टि में अवतरित होते हैं तो उनका कर्तव्य इस पृथ्वी-मंच पर कोई बहुत अधिक समय तक नहीं चलता । परमात्मा की गति अत्यंत तेज़ है, अत: वह थोड़े ही वर्षों में मनुष्यात्माओं की सृष्टि को बदलने का अथवा पतित से पावन बनाने का कार्य करके परमधाम चले जाते हैं । इस दृष्टिकोण से देखा जाये तो वह थोड़े-से वर्ष सृष्टि के इतिहास में बहुत अनमोल होते हैं क्योंकि परमपिता परमात्मा से शुभ मिलन मनाने, उनकी कल्याणकारी वाणी से लाभ उठाने, उन द्वारा ईश्वरीय-ज्ञान के अद्भुत रहस्य सुनकर गद्गद होने और उनसे सहज योग की शिक्षा प्राप्त करके आनंद रस पान करने के वही सुहावने दिन होते हैं । आत्मा का मैल धोने, हृदय-परिवर्तन करने और जन्म-जन्मांतर के लिए स्वर्ग के स्वराज्य का वरदान प्राप्त करने तथा मुक्ति की इच्छा को सहज ही सफल करने के वही क्षण होते हैं । सबसे बड़ी बात यह है कि योग द्वारा आत्मिक सुख और ईश्वरीय प्रेम के झूले में झूलने की वही घड़ियां होती हैं क्योंकि तब ही परमात्मा स्वयं सहज राजयोग सिखाते हैं । अत: जो व्यक्ति उस समय को गंवा देता है, वह नर बाद में सिर धुन-धुनकर रोता है, वह अपनी क्षति को देखकर बाद में बहुत ही पश्चाताप् करता है परंतु वह समय लौटकर फिर वापस नहीं आ सकता ।

अब हम अपने अनुभव के आधार पर जानते हैं कि परमपिता परमात्मा शिव पिछले ५० वर्षों से अपना दिव्य कर्तव्य कर रहे हैं । जिन्होंने उन्हें पहचाना है और इस संगम समय को महत्व दिया है, उन्होंने परमपिता परमात्मा से पवित्रता तथा शांति का अनमोल वरदान पाया है और वे सहज योग द्वारा प्रभु-मिलन का सच्चा सुख लूट रहे है । वे अविनाशी ज्ञान-धन से मालामाल हो रहे हैं और अपने कर्मों में दिव्यता लाकर स्वर्ग के राज्य-भाग्य का अधिकार प्राप्त कर रहे हैं । वे अवर्णनीय आनंद में मस्त रहते हुए परमधाम की यात्रा पर चल रहे हैं ।

अब परमात्मा के कार्य का काफी समय बीत गया है थोड़ा ही शेष है। उस थोड़े में से भी शांत वातावरण में ज्ञान-अमृत पीने और योग-अभ्यास से हर्ष प्राप्त करने का समय तो और भी थोड़ा रहा है। बूंद-बूंद करते, समय रूपी जल बहुत सारा तो निकल गया है, अब कुछ ही बूंदे और हैं । यदि मनुष्य अब भी नहीं जागेगा तो अपना सौभाग्य गंवायेगा और ईश्वरीय संपत्ति से तथा सर्वोत्तम सुख से सदा के लिए वंचित रहेगा । जो नर यही मानकर बैठा रहेगा कि अभी तो कलियुग का काफी समय और पड़ा है, वह पवित्रता रूपी वरदान से तथा योग और ज्ञान से रहित रहकर अपने जीवन को वृथा गंवायेगा । अत: अब कलियुग का थोड़ा ही समय शेष मानकर, पवित्र और योग-युक्त बनने में ही मनुष्य का कल्याण है। □

जालंधर—सेवाकेंद्र पर दादी हृदयमोहिनी जी के पधारने पर वे शहर के गणमान्य व्यक्तियों के साथ ग्रुप फोटो में दिखाई दे रही हैं।

"महिमा सुलाती है ग्लानि जगाती है"

ब्री.के. सूरज कुमार, माउंट आबू

संसार में ऐसा कौन मनुष्य होगा जो अपनी महिमा सुनकर आनंदित न होता हो, परंतु ऐसे कितने महा मानव होंगे, जिन्हें ग्लानि के बोल भी उतना ही सुख देते हों, जितने महिमा के बोल! उत्तर होगा—गिने-चुने विजयी रत्न। जब कोई आत्मा ज्ञान के समस्त गुह्य रहस्यों का स्वरूप बन जाती है, जब ईश्वरीय प्राप्तियां उसे सम्पन्नता के सतत अनुभवों की ओर ले चलती हैं, जब पवित्रता का आनंद उसे अतीन्द्रिय सुखों का आभास देता रहता है, तब ही निंदा के बोल भी आत्मा को आनंदित करते हैं। यही हमारी सम्पूर्णता की समीपता है और यही ईश्वरीय प्राप्तियों का प्रत्यक्ष प्रमाण।

सभी को पता है कि मनुष्य अपनी महिमा सुनना चाहता है परंतु सभी मनुष्य दूसरों की निंदा ही करते हैं। कैसा आश्चर्य है कि जो मनुष्य कभी भी स्वयं की निंदा सुनने का इच्छुक नहीं, वह गंभीर होकर कभी भी नहीं सोचता कि दूसरों की भी तो यही मनोवृत्ति है, इसलिए मुझे किसी की भी ग्लानि नहीं करनी चाहिए। सभी दूसरों को दोष देते हुए कहते हैं कि देखो यह संसार भी कैसा है, यहां कोई भी किसी की महिमा करके प्रोत्साहन नहीं देता, कोई भी किसी की महिमा नहीं सुनना चाहता, यहां सभी दूसरों की निंदा में ही आनंदित होते हैं। परंतु कोई भी आंख मूंदकर अपने अंतर को नहीं देखता कि मैं क्या करता हूं?

एक व्यक्ति अपनी निंदा सुनकर बहुत खिन्न था। हमने उसे याद दिलाया कि हमें तो परमपिता ने यही श्रीमत दी है कि बच्चे निंदा स्तुति में समान रहो, आपको समान रहना चाहिए। उसने फटाक से जवाब दिया कि शिवबाबा ने ये भी तो कहा है कि बच्चे, किसी की भी निंदा नहीं करो। ये लोग मेरी निंदा क्यों करते हैं? अब देखिए, मनुष्य को सोचना क्या चाहिए और वह सोचता क्या है? वह स्वयं के प्रति न सोचकर, यह सोचता है कि दूसरों के प्रति श्रीमत क्या है? यह विचार उसे निर्बल करता है, यदि वह स्वयं के प्रति श्रीमत का चिंतन करे, तो यह चिंतन उसे शक्ति प्रदान करेगा।

तो आओ... आज मिलकर इस विषय पर गुह्यता से विचार करें और दोनों पहलुओं में अपने को शक्तिशाली बनाएं।

महिमा की कामना—भिखारीपन है—

महिमा की कामना प्रत्येक मनुष्य की एक आम वृत्ति बन चुकी है। प्रायः अनेक लोग महिमा की खातिर ही प्रयास-रत हैं। परंतु हमें ज्ञात हो कि यह कामना मन को बहुत ही कमज़ोर बनाती है। जिसमें यह कामना पाई जाती है, उसमें ग्लानि सुनने की शक्ति नहीं होती। परंतु यदि किसी को महिमा चाहिए ही तो महिमा युक्त कर्म करे। कई लोग मुख से तो यह कहते सुने जाते हैं कि हमें महिमा नहीं चाहिए परंतु देखे जाते हैं महिमा के पीछे नींद फिटाते। वास्तव में उनका यह कहना, उन लोगों के प्रति ईर्ष्या का भाव लिये होता है जिनकी बहुत महिमा होती है।

महान आत्माएं व महान योगी तो सूर्य सम विश्व में प्रकाश फैलाते हैं। समस्त विश्व उनकी कीर्ति गाता है। अतः उन्हें महिमा की कामना की आवश्यकता नहीं। मान-शान तो लघु दीपक के समान है। भला छोटे-छोटे दीपक सूर्य सम तेजस्वी आत्माओं को क्या प्रकाशित करेंगे। अतः अपने तेजस्वी स्वरूप में स्थित हो जाएं तो ईश्वरीय प्रकाश चहुं ओर फैले और समस्त विश्व कीर्ति गान करे।

महिमा होना—महानता का प्रतीक—

इस महान संगम युग पर जो आत्माएं महिमा के पात्र बनते हैं वे निःसंदेह महान हैं। मनुष्य तो छोड़ो, भगवान भी मुक्तकंठ से उनकी कीर्ति बखानते हैं। यह महान सौभाग्य विजयी रत्नों को ही प्राप्त होता है। उन पर यहीं अंत में भक्तगण पुष्पों की वर्षा करते हैं।

श्रेष्ठ कर्मों के बाद महिमा होना स्वाभाविक है। परंतु महिमा सुनकर फूल जाना, या दूसरों को महिमा गाने का अवसर ही न देकर स्वयं ही अपनी महिमा गाने लगना या महिमा होने पर अहं भाव में आ जाना—अर्थात् इस प्रकार महिमा को स्वीकार कर लेना पतन का कारण बन जाता है। इसलिए जब महिमा हो तो उसे प्रभु अर्पण कर दो। उसका भी भोग लगा दो। यह है भी अटल सत्य कि कीर्ति ईश्वरीय अनुकम्पा का ही तो फल है। यदि ईश्वरीय छत्रछाया सिर पर न हो, तो ईश्वरीय पथ पर कोई

भी महिमा का अधिकारी नहीं बन सकता ।

अपनी महिमा सुनकर और अधिक महान् बनने का संकल्प हो, महिमा सुनकर संतुष्ट न हों, रुकें नहीं कि लक्ष्य मिल गया । तब तक महानताओं की ओर बढ़ें, जब तक आपकी महानताओं की समता ईश्वरीय महानताओं सी हो जाए । परंतु यदि किसी मनुष्य की बुद्धि साधारण होती है तो वह महिमा सुनकर सुख की नींद सो जाता है । और जब वह उठता है तो उसका बल समाप्त हो चुका होता है । अत: सावधान रहें कि महिमा हमें सुलाए नहीं, महिमा हमें गिराए नहीं, महिमा हमें अधिक बलवान बनाए ताकि हम सबको देते चलें, सबकी महिमा करते चलें।

महिमा करना—स्वभाव बनायें—

केवल मेरी ही महिमा हो— यह भावना स्वार्थयुक्त है । सबकी महिमा हो, सब महान बनें, सभी आगे बढ़ें, यही वृत्ति पुण्यात्माओं की श्रेष्ठ वृत्ति है

जैसे हमारे प्राणेश्वर शिव परमपिता सदा ही अपने सभी वत्सों की महिमा करके उन्हें आगे बढ़ाते हैं । हमने कभी नहीं देखा कि गलती होने पर भी उन्होंने कभी किसी की ग्लानि की हो । यही महान् वृत्ति हम भी अपना लें । दूसरों के श्रेष्ठ कर्त्तव्यों की, उनके श्रेष्ठ विचारों की व उनकी प्रगति की महिमा करें । इससे हमारा संगठन शक्तिशाली होगा और वातावरण भी स्नेहयुक्त बनेगा । जबकि युगों से दैवी-देवताओं की जड़ मूर्तियों की महिमा हम गाते रहे, तो अब जबकि वे ही दैवी-देवता पुन: देव पद पाने के लिए साधारण रूप में तपस्या कर रहे हैं, हम उनकी महिमा क्यों न गायें ?

ग्लानि सुनने की शक्ति धारण करें—

प्राय: कई लोगों को कहते सुना जाता है कि भई हम तो साफ दिल हैं, "साफ कहना सुखी रहना।" हम तो जो बात होती है, साफ-साफ कहते हैं । हम ऐसे स्पष्ट वक्ताओं से पूछा करते हैं कि यह तो ठीक है कि आप कोई भी बात दिल में नहीं रखते, परंतु क्या साफ-साफ बातें सुनने की शक्ति भी आप में है ? ये सुनकर वे सुन्न रह जाते हैं । और होता यही है कि उनकी बात यदि कोई उन्हें साफ-साफ कह दे तो उनका पारा १०७° चढ़ जाता है। तो इस संसार में यही दृष्टि गोचर होता है कि सुनाने की शक्ति तो सबमें है, परंतु सुनने की शक्ति बहुत ही कम लोगों में पाई जाती है । सुना देना यह कोई बहादुरी नहीं । महावीरता तो है—दूसरों की सब बातें धैर्यपूर्वक सुनकर समा लेना । और यह सम्पूर्ण सत्य है कि जो सुन लेते हैं वे सबसे आगे चले जाते हैं और जो केवल सुनाना ही जानते हैं, आगे चलकर उनकी कोई नहीं सुनता । यहां तक कि जब वे विपदा में पड़ते हैं तो न उनकी भगवान सुनता और न उनके दोस्त । तब उन्हें पता चलता है कि केवल साफ-साफ कह देना उनके लिए कितना घातक सिद्ध हुआ।

ग्लानि सुनकर गला नहीं सुखाओ—

ग्लानि सुनना तो किसी को भी नहीं भाता । परंतु महान व्यक्ति को ग्लानि सुनने के लिए अपने को तैयार रखना चाहिए । क्योंकि कोई भी अच्छे-से-अच्छा कर्म करने पर भी कुछ लोग ग्लानि के पुष्प चढ़ाने वाले अवश्य मिल जाएंगे । अत: कलियुग की यही रीति है, मनुष्य का यही स्वभाव है, ऐसा जान ग्लानि सुनकर अपना कंठ मत सुखाओ अर्थात् अपनी स्थिति व खुशी को नष्ट मत करो और कर्म व ज़िम्मेदारी से किनारा करने की भी न सोचो ।

महान व्यक्ति को सुनना ही पड़ता है । ज़िम्मेदार व्यक्ति को सुनना ही पड़ता है । यदि कोई मनुष्य कुछ बड़ा कार्य करता ही न हो, तो उससे गलती भी भला क्यों होगी और तब कोई उसकी ग्लानि क्यों करेगा ? जो व्यक्ति कर्म क्षेत्र पर है, जो निशि-दिन सेवा में रत है उससे भूल होना कोई विशेष बात नहीं । अत: उसकी ग्लानि भी होगी ही । परंतु अपनी ग्लानि सुनकर अपनी गलतियों को ठीक करके आगे बढ़ते चलो । ग्लानि सुनकर रुकने से और ही अधिक ग्लानि होगी । इसलिए याद रहे—रुकना जड़ता है, चलना ही चेतनता है ।

ग्लानि सुनकर बलशाली बनो—

कोई हमारी ग्लानि न करे—यह संकल्प कायरतापूर्ण है । यदि कोई हमारी ग्लानि ही न करे तो हम मान-अपमान में समान बनने का पुरुषार्थ भी क्यों करेंगे । तो बलिहारी है ग्लानि करने वालों की जो हमें समान स्थिति बनाने के लिए बार-बार प्रेरित करते हैं । वास्तव में वे हमारे सहयोगी हैं । ग्लानि हमें जागृत रखती है । किसी ने ठीक ही कहा है—"निंदक नियरे राखिये।" निंदक पास होगा तो हम सदा सचेत रहेंगे और अलबेलेपन में कभी भी गलती नहीं करेंगे तो क्या वें हमारे शुभचिंतक नहीं हुए ?

संसार में कई मनुष्यों ने अपनी ग्लानि सुनकर ही महान कर्त्तव्य करने की ठानी और वे उच्च शिखर पर पहुंचे । ऐसे कई शक्तिशाली मनुष्य हुए कि जितनी उनकी ग्लानि हुई, वे और दृढ़ता से खड़े होते गए । तो हम भी अपनी ग्लानि को शक्तिशाली बनने का आधार बना लें । तो ग्लानि हमारे लिए वरदान बन जायेगी ।

आज हम जब पीछे मुड़कर देखते हैं तो उन मनुष्यों की दिल

से शुक्रिया करते हैं, जो सदा ही हमारी ग्लानि करते थे । उन्होंने ही हमें शक्तिशाली बनाया । यदि वे न होते तो केवल महिमा हमारे उत्थान के लिए पर्याप्त न होती ।

निंदक के प्रति हमारा दृष्टिकोण—

'हमारी निंदा होना'—इसके सूक्ष्म कारणों पर दृष्टि डालने से यह स्पष्ट हो जाता है कि इसका कारण कहीं-न-कहीं हम ही हैं । हम अपनी शुभ-भावनाओं का स्वरूप इतना विशाल कर दें कि दूसरों को अपना यह कार्य त्यागने के लिए बाध्य होना पड़े । निंदक के प्रति भी प्रेम, निंदक के प्रति भी श्रेष्ठ भावना, सम्मान की भावना या मित्रवत् भावना—यही वास्तव में बाप-समान महान् आत्माओं का लक्षण है । जबकि स्वयं भगवान ने हमें नारा दिया, "निंदा हमारी जो करे, मित्र हमारा सोय।" तो क्यों न हम उन्हें अपना परम मित्र समझें।

निंदा होने पर सरलता न छोड़ें—

कोई भी निंदक काला बादल बनकर किसी तेजस्वी आत्मा के प्रकाश को फैलने से नहीं रोक सकता । यह सोचना गलत है कि लोग हमारी निंदा करते हैं या बड़ों को हमारी गलत रिपोर्ट देते हैं इससे हमारा मान कम होता है, नहीं । इससे प्रकाश अधिक फैलता है परंतु तब, जब निंदा सुनकर हम डिस्टर्ब न हों । तो निंदा सुनकर फौरन भारी न हों, ज़रा हल्के रहने का अभ्यास करें । उस समय साक्षी होकर जरा अपने विचार प्रवाह को देखें—कि अब मैं क्या सोच रहा हूं, और मुझे वास्तव में क्या सोचना चाहिए । अपने विचारों को ज्ञान-स्वरूप होकर यथार्थ मोड़ दें।

ऐसा संसार में एक भी मनुष्य नहीं होगा जिसे निंदा के कटु बोल न सुनने पड़े हों । अत: यह सोचकर स्वयं को भारी न कर दो कि मेरी ही सब निंदा करते हैं । दूसरी बात—जिसकी महिमा होती है, उसकी निंदा भी अवश्य होगी । अत: भारी होने की आवश्यकता नहीं । हां, यह अवश्य चैक करें कि मेरी किसी कमी के कारण सब लोग मेरी निंदा करते हैं । निंदा सुनकर अपनी कमियों के बारे में अलबेला होना भी ठीक नहीं । निंदा के समय ज्ञान-बल द्वारा अडोल रहने का अभ्यास करना चाहिए । यदि हम निंदा से परेशान न होकर, निंदा स्तुति में समान रहने का पुरुषार्थ करें तो जीत हमारी निश्चित ही होगी ।

तो आओ, हम स्वयं से प्रतिज्ञा करें कि हम किसी की निंदा नहीं करेंगे । निंदा करना हमारे कमल मुख की शोभा नहीं है । निंदा करके हम स्वयं भी आत्मग्लानि महसूस करते हैं और ईश्वरीय अवज्ञा के फलस्वरूप ईश्वरीय प्यार के भी पात्र नहीं बनते । साथ-साथ निंदा सुनने की महान शक्ति भी हम धारण करें ताकि संसार हममें ईश्वरीय ज्ञान का प्रत्यक्ष स्वरूप देख सके । इस प्रकार हम समानता को धारण कर बाप-समान सर्वश्रेष्ठ स्थिति की ओर आगे बढ़ें। □□□

"मैं" और "मेरा परिचय"

बी.के. सतीश कुमार, आबू

तन के भव्य भाल पर विराज रहा मैं,
खोल पुतलियों के पट निहार रहा मैं।
मैं प्रकाश पुंज हूं, अनन्त शक्तिवान हूं,
दिव्य ज्योर्तिबिंदु हू, मैं शिव पिता समान हूं।
सृष्टि का श्रृंगार हूं, इस जगत का सार हूं,
योनियों में श्रेष्ठ मनुज देह का आधार हूं।
प्राण धरे तन में संचार रहा मैं,
खोल पुतलियों के पट निहार रहा मैं।
धरा का मैं सितारा हूं, देह का उजाला हूं,
सर्व का सहारा, मैं शिव पिता का प्यारा हूं।
न्यारा हूं, निराला हूं, प्रसन्नचित्त वाला हूं,
न्यारा हूं, प्यारा हूं, शीतला और ज्वाला हूं।
दिव्यगुणों से निज को नित निखार रहा मैं
खोल पुतलियों के पट निहार रहा मैं।

सत्य हूं, चैतन्य हूं, मैं आनंदवान हूं,
शिव की रचना मैं तो सर्व सामर्थ्यवान हूं।
अज हूं मैं अमर भी हूं अनादि औ अनंत हूं,
तंत्र तन का मंत्र, मैं इस यंत्र का महंत हूं।
खुद को ज्ञान-योग से सवार रहा मैं,
खोल पुतलियों के पट निहार रहा मैं।

दूर हर नशे से मगर इक नशे में चूर हूं
मैं खुदाई नूर हूं, चैतन्य कोहिनूर हूं।
खुशियों से भरपूर दिल में रखे यह गरूर हूं,
ठान लूं जो चाहूं तो कर सकता मैं ज़रूर हूं।
संग शिव के स्वर्ग भू पे ला रहा हूं मैं,
खोल पुतलियों के पट निहार रहा मैं। □

प्रभु! आपको क्या प्रिय है?

□ब्र.कु. गोदावरी, मुलुंड, बम्बई

बालक:—प्रभु आपको क्या प्रिय है? आप हमें कभी कुछ कहते क्यों नहीं हो?

प्रभु:—बेटा, तू तो जानता ही है कि मैं निराकार परमात्मा शिव परमधाम में रहने वाला सृष्टि के अंतिम समय पर अर्थात् कलियुग के अंत में प्रजापिता ब्रह्मा के तन में आने वाला हूं। स्थापना का कार्य करने आता हूं और फिर वापस चला जाता हूं। इसलिए इसमें कुछ प्रिय लगने न लगने का सवाल ही नहीं है। यह सवाल तो साकार देहधारी मनुष्यात्माओं के लिए उठ सकता है। समझा! बेटा।

बालक:—जी हां, प्रभु समझ गया। परंतु मुझे रोज़ ख्याल आता है कि आपको जो प्रिय (अच्छा) लगे वही करना चाहिए। परंतु आपको क्या प्रिय है वही मेरी समझ में नहीं आता है। प्रभु, आप ही कहिए ना! आपको क्या प्रिय है?

प्रभु:—बेटा, मुझे सब-कुछ प्रिय है। तू प्रिय है, सारी दुनिया के बच्चे भी मुझे प्रिय हैं।

बालक:—प्रभु, आप तो बहुत ही विशाल दिल हो। इस दुनिया में कई बच्चे आपको समय आने पर ही याद करते हैं। कई तो आपको पहचानते भी नहीं हैं। आपके बारे में ऐसी-ऐसी बातें सुनाते हैं जो हमसे सुनी नहीं जातीं। वे कहते हैं—घट-घट में भगवान है। कच्छ, मच्छ, वाराह आदि सब भगवान के ही अवतार हैं। जहां देखो वहां प्रभु ही प्रभु है। कोई शराब पीते हैं, कोई जुआ खेलते हैं, कोई गालियां देते हैं, कोई आपस में मारामारी, लड़ाई-झगड़ा करते हैं, छलकपट से झूठ बोलते हैं आपके नाम पर ढोंग रचाते हैं, प्रभु बनने का भी दावा करते हैं, इन सब बातों को हमारा दिल सहन नहीं कर सकता। प्रभु मैं क्या करूं?

प्रभु:—(हंसते-हंसते) बेटा, अपना दिल छोटा मत कर किसी के कहने से क्या होगा? आपकी दुनिया में कोई प्रधानमंत्री का नाम खुद पर ले लेवे तो उसके कहने से वह प्रधानमंत्री थोड़े ही बन सकता है? इसी प्रकार भले ही कोई खुद को भगवान समझे या प्रभु समझे परंतु उसके समझने से वह प्रभु थोड़े ही बन सकता है? मैं जो हूं वही रहूंगा और बच्चे-बच्चे ही रहेंगे। इसलिए बेटा, तू मेरे लिए कुछ भी फिकर मत कर, समझा! भले मेरे नाम से कोई ढोंग रचाए उसमें मेरा कुछ नुकसान होने वाला नहीं है, वह खुद ही खुद का नुकसान कर रहा है।

बालक:—प्रभु, आपकी बात बिल्कुल सही है। फिर भी मुझे घड़ी-घड़ी यही सवाल उठता है कि प्रभु आपको विशेष क्या प्रिय है?

प्रभु:—बेटा, अभी तक तू ये बात भूला नहीं है? मुझे तो बार-बार हंसी आती है कि मां-बाप बच्चों से पूछते हैं कि बच्चे, आपको क्या प्रिय है? आज बच्चे मां-बाप को पूछते हैं कि आपको क्या प्रिय है? जो मुझे अच्छा लगता है, वह मेरी इच्छा आप पूरी कर सकते हो?

बालक:—जी हां, प्रभुजी, कहिए ना! जरूर-जरूर पूरी करेंगे।

प्रभु:—तो सुन, इस दुनिया में मुझे आए हुए कितने वर्ष हुए?

बालक:—५० वर्ष।

प्रभु:—और आपको?

बालक:—५००० वर्ष।

प्रभु:—५००० वर्ष में आपने क्या-क्या किया?

बालक:—पिताजी, आप तो जानते ही हो कि ५००० वर्ष में ८४ जन्मों के चक्र में आकर हमने चढ़ती कला और उतरती कला का अनुभव किया।

प्रभु:—क्या अनुभव किया?

बालक:—प्रभु, सतयुग में हम चढ़े त्रेता में ढले द्वापर में गिरे और कलियुग में लड़े।

प्रभु:—क्या कहा? कलियुग में लड़े?

बालक:—जी हां प्रभु, आपको भूलने से विकारों रूपी रावण ने हमारे मनरूपी घर में प्रवेश करके हमें दुखी अशांत बना दिया, देहभान में लाकर आपस में लड़ाया। यह तो हमारा श्रेष्ठ भाग्य था जो आप संगम पर हमें मिले और हम जाग गये।

प्रभु:—तो अब क्या करना है?

बालक:—प्रभु, आप ही बताइए! आपको जो अच्छा लगे वही करेंगे। (रोने जैसा आवाज़)

प्रभु:—इसमें रोने की क्या बात है ?

बालक:—प्रभु-प्रभु, मैंने दस सिर वाला रावण देखा ।

प्रभु:—(चौंककर, खड़े होकर) कहां है रावण ? तू भी बहुत डरपोक है । जो मेरी छत्रछाया में और मेरी गोद रूपी सिंहासन पर बैठा है, क्या उसे रावण दिखाई दे सकता है ? यह तो भ्रम का भूत है। बेटा, तू तो शांति का दूत है।

बालक:—प्रभु, आपको खड़े होते देखकर रावण भाग । लगता है वह आपकी शक्ति से डर गया है। हमारे जैसे लोगों को तो वह घोलकर पी जाए । प्रभु, आपके हजारों हाथों के समान शक्ति के आगे रावण के दस सिर की कोई भी युक्ति चल नहीं सकती, यह तो हकीकत है, सत्य है।

प्रभु:—बेटा, इसलिए तो मैं ५० साल से आपके सन्मुख हाज़िर हूं।

बालक:—पिताजी, कई लोग हमें बहुत ही परेशान करते हैं । कहते हैं आपके पास अगर भगवान है तो आप मरे हुए को जिंदा क्यों नहीं कर सकते ? आप इस दुनिया के मनुष्यात्माओं के दुख, रोग, शोक और कष्ट दूर क्यों नहीं कर सकते ? हमें भगवान क्यों नहीं दिखा सकते ? प्रभु, ऐसे लोगों को क्या कहें ?

प्रभु:—बेटा, इसमें मूंझने की क्या बात है ? उनको कहो पहले आप खुद को तो पहचानो कि मैं कौन हूं ? मेरा रचयिता परमात्मा पिता कौन है ? वर्तमान समय इस सृष्टि पर परमात्मा मानव जीवन परिवर्तन का महान कार्य सहज ज्ञान और राजयोग द्वारा कर रहे हैं, उसे जानो। उनको यह भी समझाओ कि यह शरीर तो विनाशी है । चैतन्य शक्ति आत्मा अविनाशी है । आत्मा का पिता निराकार शिव है । आप खुद को परमात्मा की संतान निश्चय करो तो आपको उनके कर्तव्य का ख्याल आयेगा और आपको सभी प्रश्नों का हल मिल जायेगा । समझा !

बालक:—जी हां, पिताजी समझा ! प्रभु फिर एक बात याद आई । पूछूं ? प्रभु आपको समय तो है ना ?

प्रभु:—समय तो बहुत कम है, परंतु तू स्व-कल्याण और विश्वकल्याण के लिए पूछ रहा है, यह देखकर मुझे अति हर्ष हो रहा है । बोल बेटा !

बालक:—प्रभु, आपने ब्रह्मा, विष्णु, शंकर इन तीन देवताओं की रचना की उनमें से ब्रह्मा और शंकर को बिठाया क्यों है ? और विष्णु को खड़ा क्यों किया है ? विष्णु जी थक नहीं जायेंगे ?

प्रभु:—(हंसते-हंसते) बेटा, इतना भी समझ में नहीं आया ? सुन, ब्रह्मा का कार्य है स्थापना का, शंकर का कार्य है विनाश करना और विष्णु का कार्य है पालना करना । विष्णु को दोनों तरफ देखना पड़ता है। चार भुजाधारी विष्णु नर-नारी के पवित्र जीवन का स्वरूप है। बेटा, आपके जीवन का भी यही लक्ष्य है। आपको सदा अपने लक्ष्य की याद दिलाने के लिए विष्णु देवता खड़े पैर हाजिर हैं। आप कभी भी अपने श्रेष्ठ कर्मों से वंचित न होना । बालक, युवा, वृद्धा, नर-नारी सभी को श्री लक्ष्मी, श्री नारायण समान बनने का पुरुषार्थ करना है। विष्णु स्वरूप पुरुषार्थ का प्रतीक है।

बालक:—अच्छा, प्रभुजी, इन सभी में आपको विशेष कौन प्रिय है ?

प्रभु:—बेटा, तीनों देवताओं का विशेष कार्य है और वह अपना कर्तव्य बजाने में चुस्त है इसलिए ये तीनों ही देवताएं मुझे विशेष प्रिय हैं ।

बालक:—तो प्रभुजी, इस हिसाब से आप हमारी गिनती कहां करेंगे। क्योंकि हम तो अपनी ड्यूटी में सही नहीं हैं ।

प्रभु:—तो... तो... फिर आपको ओक्ट्राए ड्यूटी (Octroi Duty) चुंगी भरनी पड़ेगी।

बालक:—प्रभु ! प्रभु !! ओक्ट्राए ड्यूटी (Octroi Duty) !!! माना ?

प्रभु:—जी हां, मनुष्यात्माओं को अपने किए हुए कर्मों का फल भोगना ही पड़ेगा । धर्मराज के दूत उन्हें छोड़ेंगे नहीं । समझा ! ओक्ट्राए ड्यूटी (Octroi Duty) माना जब तक आप अपने पाप-कर्मों के खाते को चुक्ता नहीं करेंगे तब तक आप परमधाम या स्वर्ग में जा नहीं सकते । शरीर रूपी कार के साथ आत्मा रूपी ड्राईवर (Driver) स्वर्ग के गेट में प्रवेश नहीं कर सकेगा।

बालक:—ओह ! इतनी कड़ी सज़ा ! प्रभु, सज़ा की बात सुनकर तो मेरा अंग-अंग कांपने लगा है । आत्मा शरीर छोड़कर जा रही हो ऐसा अनुभव हो रहा है। प्रभु, ऐसा कोई रास्ता बताओ जो मुझे ओक्ट्राए ड्यूटी (Octroi Duty) भी न भरनी पड़े और मेरी कार सीधा ही स्वर्ग के गेट में चली जाए ।

प्रभु:—बेटा, उसके लिए एक ही सीधा रास्ता है। अब समय कम है, इसलिए तू धारणा कर ।

बालक:—पिताजी, क्या धारणा करूं मुझे जल्दी बताइए ना ?

प्रभु:—बेटा, घबराता क्यों है ? तू निडर बन । मैं तेरे साथ ही हूं । दिव्य गुणों की धारणा कर । कोई भी विकार आये

तो तू ज्ञान और राजयोग की शक्ति से उसे दूर कर । विकारों को वश करके उन पर विजय प्राप्त कर । विकारों के अधीन मत होना । मेरी सर्वशक्तियां तेरे साथ ही हैं । तू घबराहट क्यों अनुभव करता है ? बेटा, तू दृढ़ निश्चय रख । व्यर्थ बोलना, व्यर्थ सुनना, व्यर्थ सोचना, व्यर्थ कर्म करना ये सब माया की निशानियां हैं, उनसे तू दूर रहना।

बालक:—पिताजी, आप कितने अच्छे हो । कितने रहमदिल और विशालदिल हो । एक सैकंड में आपने फर्श से अर्श का अनुभव करा दिया । अवगुणों को भूलाए गुणग्राही बना दिया । प्रभु, आप मुझे बहुत ही प्रिय लगते हो ।

प्रभु:—बेटा, तू भी मुझे बहुत ही प्रिय लगता है।

बालक:—प्रभु, और आपको क्या प्रिय लगता है ? कहिए ना !

प्रभु:—तो सुन, जो मेरी आज्ञा पर चलकर अपने जीवन को देवतुल्य-हीरेतुल्य बनाता है, सच्चाई-सफाई से चलता है, किसी को दुख नहीं देता, कोई विकर्म नहीं करता, बेहद बाप की इज्ज़त नहीं गंवाता, सब विकारों से दूर रहता है, ईर्ष्या, द्वेष, वैरभाव से अपने को बचाकर रखता है, अंतर्मुखी आत्माभिमानी स्थिति में ही रमण करता है, कांटों के समान खुद के स्वभाव संस्कारों को कोमल फूल समान बनाता है, एक मुझमें ही बुद्धियोग लगाता है, दूसरों को भी गुणवान बनाता है ऐसा बच्चा मुझे बहुत ही प्रिय है । और सुन मुझे वह बच्चा भी प्रिय है जो समय को देखते हुए तीव्र पुरुषार्थ करता है । ५० वर्षों से मैं आपके सन्मुख हूं इसका मतलब यह नहीं कि मैं दूसरे भी ५० वर्ष तक रुकूंगा । मेरे जाने का समय अब हो चुका है, इसलिए समय की अंतिम सावधानी दे देता हूं । अब मानो न मानो आपकी मर्जी ।

बालक:—प्रभु ! हमारे लिए आपसे ज्यादा प्रिय और कौन हो सकता है ? प्रभु, आप जैसा कहेंगे वैसा ही करेंगे और आपको जो अच्छा लगे वही करेंगे ।

प्रभु:—बेटा, उसमें ही आपका कल्याण है। किसको क्या प्रिय है ? क्या नहीं है ? इस झमेले में न जाकर जो मेरी श्रीमत पर चलता है वही मुझे प्रिय है। समझा ?

बालक:—बस...बस... प्रभु समझ गया । अब आपको जो अच्छा लगेगा वही करूंगा ? □

हापुड़—'राष्ट्रीय एकता शांति सम्मेलन' में पधारे उ.प्र. शिक्षा राज्यमंत्री भ्राता सैयद जी को ब्र.कु. सीतू सौगात देती हुई।

बेलगाम—बी.के. महादेव लाइन क्लब में प्रवचन करते हुए।

जालंधर के समीप झंकर गांव में स्त्री सभा में ब्रह्माकुमारी राज प्रवचन करते हुए।

मुक्ति के बाद क्या ?

□ले.-ब्र.कु. रामकृषि शुक्ल, लखनऊ

बहुत-से लोग प्रश्न करते हैं कि मुक्ति अवस्था प्राप्त करने वाली आत्मा के तो पूर्व कर्म सब समाप्त हो जाते हैं अर्थात् उसके कोई संचित या प्रारब्ध कर्म तो रहते ही नहीं हैं, तब यदि आत्मा मुक्ति अवस्था से इस सृष्टि में लौटती भी है तो वह किस आधार से जन्म लेती है ? अब, जो लोग मुक्ति के बाद आत्मा का इस सृष्टि में लौटना मानते हैं (जैसे कि आर्यसमाजी), वे प्राय: कहते हैं कि मुक्ति के बाद आत्माएं **'नई सृष्टि के शुरू में ही लौटती हैं और वे युवा रूप में ही शरीर धारण करती हैं और उनमें से कोई भी लंगड़ा, कुबड़ा आदि नहीं होता और सभी स्वतंत्र होते हैं और उनका जन्म मैथुन (काम विकार) से नहीं होता।' परंतु वे लोग इस बात को स्पष्ट रूप से नहीं जानते कि यदि सृष्टि मैथुनी नहीं होती तो कैसी होती है और सभी युवा ही कैसे होते हैं और उनमें से कोई भी लूला-लंगड़ा क्यों नहीं होता और जबकि उनके पूर्व कर्म ही नहीं होते तो वह जन्म किस आधार पर लेते हैं ?**

अब इस बारे में हमें परमपिता परमात्मा शिव ने समझाया है कि कल्प के अंत में कुछ मनुष्यात्माएं तो ईश्वरीय ज्ञान और सहज राजयोग की शिक्षा को धारण करके ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करतीं, इंद्रियों तथा विषय-विकारों पर विजय प्राप्त करतीं तथा सम्पूर्ण अहिंसा से व्यवहार करती हैं और दूसरों को भी ईश्वरीय ज्ञान तथा योग का परिचय देती हैं और, इस प्रकार **के सर्वोत्तम पुरुषार्थ से जीवन मुक्ति की प्राप्ति करती हैं।** अन्य मनुष्यात्माएं जो यह पुरुषार्थ नहीं करतीं, वे इस सृष्टि का महाविनाश होने के परिणामस्वरूप शरीर-मुक्त होकर, धर्मराज द्वारा अपने रहे हुए विकर्मों का दंड भोगकर ब्रह्मलोक को लौट जाती हैं और वहां ही मुक्ति अवस्था में रहती हैं । इनमें से प्रथम प्रकार की मनुष्यात्माएं जो पुरुषार्थ से अपने संस्कार सतोप्रधान बना गई होती हैं और अन्यान्य हजारों-लाखों मनुष्यों को परमपिता परमात्मा का परिचय देकर उन्हें भी पवित्र बनाने का महान कार्य अथवा पुण्य कर गई होती हैं, वे **नई सृष्टि के शुरू में**, अर्थात् सतयुग के आरंभ में जन्म लेती हैं ।

उनके जन्म का आधार उनके सतोप्रधान संस्कार तथा पूर्वकाल में दूसरों की ज्ञान-सेवा रूप पुण्य कर्म होते हैं । वे सतयुग में मैथुन द्वारा नहीं बल्कि माता-पिता के योगबल अथवा मनोबल द्वारा ही जन्म लेते हैं । सतयुग और त्रेतायुग में तो मैथुनी सृष्टि होती ही नहीं क्योंकि इन दो युगों में केवल वही मनुष्यात्माएं मुक्तिधाम से इस सृष्टि में आती हैं जिन्होंने पूर्व जन्म में पूर्ण रूप से ब्रह्मचर्य का पालन किया होता है । सतयुग (और त्रेतायुग) के इन दिव्य-गुणधारी लोगों को 'देवी-देवता' कहा जा सकता है । जन्म तो इनका भी माता के गर्भ से होता है परंतु कोई भी पूर्वकाल का पाप-कर्म न होने के कारण उन्हें कोई दुख नहीं होता । ये कभी भी वृद्धावस्था से पीड़ित नहीं होते बल्कि काफी आयु होने के बाद स्वेच्छा से वे अपना शरीर छोड़ देते हैं जैसे कि सर्प अपनी पुरानी कैंचुली को उतारकर नई धारण कर लेता है। इसीलिए श्री लक्ष्मी श्री नारायण, श्री सीता श्री राम आदि के चित्रों में उन्हें सदा ही 'युवा अवस्था' में प्रदर्शित किया जाता है और यह भी प्रसिद्ध है कि वह लोग 'युवा अवस्था में ही रहते थे।' परंतु इसका यह अर्थ नहीं है कि सतयुग के शुरू में मनुष्य पैदा ही युवा रूप में होते थे बल्कि ये अर्थ है कि वे वृद्धावस्था से पीड़ित नहीं हुए थे । वे जीवनमुक्त थे अर्थात् विकर्मों के बंधन में न थे, इसलिए ही कहा जाता है कि वे सदा 'स्वतंत्र' थे ।

अन्य जो मनुष्यात्माएं मुक्तिधाम (ब्रह्मलोक) में गई होती हैं, वे भी स्व-स्व अवस्था अथवा मनशक्ति के अनुसार अपने-अपने समय पर इस सृष्टि में आती हैं । कल्प के अंत में मुक्तिधाम जाते समय जो मनुष्यात्माएं रजोगुणी अवस्था वाली होती हैं वे अगले कल्प के द्वापर युग में और जो तमोगुणी होती हैं वे अगले कल्प में कलियुग में आती हैं । अत: ये मालूम रहे कि सभी आत्माएं **'अगले' कल्प में ही मुक्ति अवस्था से इस सृष्टि-मंच पर आती हैं और आने का नियम यह है कि कल्प के अंत में जिसके जैसे संस्कार थे, उनके अनुकूल युग में और अनुकूल सृष्टि में ही उनका आना होता है। परंतु पहले-पहले कोई भी मनुष्यात्मा जब इस सृष्टि पर आती है तो उसे दुख नहीं होता बल्कि वह सुखी होती है, धीरे-धीरे ही वह विकर्म-बंधन तथा दुख के बंधन में बंधती है, इनमें से भी जो मनुष्यात्माएं सतयुग के आरंभ में आती हैं, उनको तो १००% अथवा १६ कला सम्पूर्ण पवित्रता, सुख और शांति प्राप्त होती है। उसकी इस अवस्था को 'जीवनमुक्त अवस्था', उनके पद को 'देव पद' और उनके**

उस काल की इस सृष्टि को 'स्वर्ग' कहा जाता है। उस काल में कोई भी लूला, लंगड़ा, अंधा, बहरा या निर्धन व्यक्ति नहीं होता।

मनुष्यात्माएं ब्रह्मलोक में कितना समय रहती हैं ?

अब प्रश्न उठता है कि मनुष्यात्माएं ब्रह्मलोक में मुक्ति की अवस्था में कितने समय तक रहती हैं ? इसके विषय में शास्त्रवादी लोग छान्दोग्य उपनिषद के एक वाक्य (...यावदायुषं ब्रह्मलोकम भिपद्यते) का आधार लेते हैं। इसके अनुसार स्वामी शंकराचार्य, स्वामी आनंद गिरि, आर्यसमाजी लोग तथा अन्य कई शास्त्रवादी लोग यह मानते हैं कि **''जब तक ब्रह्मलोक की आयु रहती है''** अर्थात् जब तक ब्रह्मलोक का नाश नहीं होता तब तक आत्माएं वहीं रहती हैं। वे कहते हैं कि ब्रह्म का एक दिन सतयुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग अर्थात् कल्प के बराबर होता है। और ब्रह्म की आयु (कई लोग कहते हैं कि ब्रह्मा की आयु) १०० वर्ष होती है। उसके बाद वे ब्रह्मलोक का विनाश और आत्माओं का वहां से लौटना मानते हैं। परंतु वास्तव में उनका यह मन्तव्य ठीक नहीं है।

अब परमपिता परमात्मा शिव अति कृपा करके जो ज्ञान दे रहे हैं उसके आधार पर हम समझते हैं कि ब्रह्मलोक तो शाश्वत अर्थात् अविनाशी लोक है। गीता में भी बताया गया है कि ब्रह्मलोक तक अर्थात् उससे नीचे के लोकों में तो परिवर्तन होता है परंतु ब्रह्मलोक, जो कि स्वयं भगवान का परमधाम है, वह नित्य ही रहता है। उसका कभी भी विनाश नहीं होता, न ही ब्रह्मा की आयु १०० दिव्य वर्ष है बल्कि ब्रह्म महत्तत्व तो अनादि, अपरिवर्तनीय और अविनाशी है। हां, प्रजापिता ब्रह्मा की आयु १०० वर्ष (हमारे मन्तव्य के अनुसार १०० मानवीय वर्ष) है। अब हम अपने अनुभव के आधार पर जानते हैं कि कल्प के अंत में परमपिता परमात्मा शिव प्रजापिता ब्रह्मा के तन द्वारा ईश्वरीय ज्ञान तथा योग की शिक्षा देते हैं और जब ब्रह्मा की १०० वर्ष की आयु पूरी होती है तब इस ब्रह्मालोक (न कि ब्रह्मलोक) का, अर्थात् इस मनुष्यलोक का जिसमें कि प्रजापिता ब्रह्मा रहते हैं, महाविनाश शुरू हो जाता है और आत्माएं मुक्तिधाम को चली जाती हैं और फिर अगले कल्प में वे अपने-अपने समय पर अपने अव्यक्त पार्ट को इस सृष्टि-नाटक में व्यक्त करने आती हैं। **इसीलिए ही प्रसिद्ध है कि आत्माएं 'उसी कल्प' में मुक्तिधाम से नहीं लौटतीं बल्कि 'अगले कल्प' में आती हैं। परंतु आप ही सोचिए कि अगले कल्प में भी आत्माओं के लौटने के समय का कोई नियम तो निर्धारित होगा ना ? और वह नियम इसके सिवा और क्या हो सकता है कि जैसा स्वभाव आत्माओं का अंत समय में होता है, उसके अनुसार ही अगले कल्प में, इस सृष्टि में उनकी गति होती है। अतः मालूम रहे कि मुक्तिधाम में सभी आत्माएं ब्रह्मलोक की आयु तक नहीं रहतीं बल्कि मुक्तिधाम में रहने के लिए हरेक आत्मा की आयु (समय) अलग-अलग है और वह उसके अपने पूर्व पुरुषार्थ और संस्कारों पर आधारित है।**

आप जरा सोचिए कि यदि ब्रह्मलोक का विनाश होता और उसके विनाश के बाद ही सभी आत्माओं का इस संसार में लौटना होता तब तो सभी मुक्त आत्माओं का इस संसार में व्यक्त होना अर्थात् शरीर लेना भी असंभव हो जाता क्योंकि एक ही समय में सभी आत्माएं कैसे शरीर ले सकतीं ? इससे स्पष्ट है कि न तो ब्रह्मलोक का कभी विनाश होता है न ही ब्रह्मलोक के विनाश तक आत्माएं वहां मुक्ति अवस्था में रहती हैं, बल्कि उनमें से कुछ आत्माएं किसी युग में और अन्य किसी दूसरे युग में आती रहती हैं अर्थात् कुछ आत्माएं अगले कल्प के आरम्भ में, कुछ मध्य काल में तथा कुछ उपांत काल में आती ही रहती हैं। परंतु आप ही सोचिए कि अगले कल्प के भी मध्य और उपांत में अर्थात् द्वापर युगी तथा कलियुगी रजो अथवा तमोप्रधान संसार में जो मुक्त आत्माएं व्यक्त होती हैं, उनके व्यक्त होने का भी इसके सिवा और क्या कारण हो सकता है कि मुक्ति प्राप्त करने से पूर्व उनके संस्कार रजोगुणी और तमोगुणी थे ?

संक्षेप में, इससे सिद्ध हुआ कि मुक्ति के बाद इस सृष्टि में आना तो होता ही है क्योंकि आत्माएं इस नाटक में अपना पार्ट बजाना चाहती हैं, जिसके संस्कार उनमें मुक्ति अवस्था में भी समाए हुए होते हैं और वे अगले कल्प में, अपने-अपने स्वभाव और पार्ट के अनुसार अपने-अपने समय पर (युग में) आकर व्यक्त होती हैं और कल्प के अंत तक जन्म-पुनर्जन्म लेती हैं, जब तक कि मुक्तिदाता तथा ज्ञान-दाता परमपिता परमात्मा शिव प्रजापिता ब्रह्मा द्वारा ज्ञान तथा योग सिखाकर या शंकर द्वारा कलियुगी सृष्टि का महाविनाश कराके उन्हें मुक्त न करें। **'मुक्ति' अर्थात् दुख की पूर्ण निवृत्ति की अवस्था के बाद हरेक आत्मा इस सृष्टि में आकर जीवनमुक्ति अर्थात् सुख की प्राप्ति भी भोगती है, बाद में ही वे जीवनबद्ध होती हैं और फिर मुक्ति की प्राप्ति करती हैं और इस प्रकार यह अनादि खेल सदा चलता ही रहता है।** □

कहानी

गरीब के सात रुपये

ले.-ब्र.कु. चक्रधारी, दिल्ली

बहुत पहले की बात है कि एक राजा के मंत्री थे जिनका नाम था उदयन । वे एक तीर्थ स्थान का जीर्णोद्धार (Renovation) करा रहे थे । परंतु अभी वह कार्य पूरा ही नहीं हुआ था कि उनका देहावसान हो गया । उन्होंने अपने सुपुत्र, जो उनके बाद मंत्री निश्चित हुए, को मरते समय अपनी यह इच्छा बताई कि जीर्णोद्धार का यह कार्य रुकना नहीं चाहिए बल्कि इसे सम्पन्न किया जाना चाहिए । अत: अब नये मंत्री महोदय ने उस कार्य को आगे बढ़ाना शुरू किया । उसके सज्जन स्वभाव को देखकर और कार्य के भी धार्मिक महत्व को समझकर कई सेठ और धनाढ्य व्यक्ति मंत्री महोदय के पास गये और उन्होंने भी इस शुभ कार्य में सहयोग देने की इच्छा प्रकट की ।

एक सेठजी बोले—"मंत्रीजी, यों तो आप समर्थ हैं और आप अकेले ही इस तीर्थ स्थान का जीर्णोद्धार कर सकते हैं परंतु हम पर भी तो आपकी कृपा होनी चाहिए । मंत्रीजी, हमारा भाव यह है कि हमें भी अपना कुछ पैसा सफल करने का अवसर दीजिए । हमारा भी कुछ पैसा इसमें लगेगा तो हमारे कुटुम्ब परिवार का भला हो जायेगा । बड़ों ने कहा भी है कि करो दान तो हो कल्याण।

एक दूसरे सेठजी मंत्री के पास गए और बोले—"मंत्रीजी, इस भले काम में सारा अपना ही पैसा लगाए जाओगे या हमें भी अपना भविष्य उज्ज्वल बनाने का चांस (Chance) दोगे ? यह जीर्णोद्धार का कार्य तो गोया हमारे भी उद्धार का कार्य है । हमारा भी इसमें धन का कुछ अंश लग जायेगा तो वंश सुखी होगा।"

एक तीसरा धनवान बोला—"मंत्रीजी, पैसा हमारे पास पड़ा है, कुछ लग जायेगा तो हमें भी संतोष होगा, वर्ना कल के छोरे पता नहीं किस काम में लगा देवें । इसमें एक ईंट तो हमारी तरफ से भी लगाने दो । बुरा मत मानना । यों तो आप अकेले ही काफी हो पर इब के हमारी यह बात तो मान ही ल्यो।"

एक अन्य साहूकार बोला—"मंत्रीजी, मंत्रीजी, इस अच्छे काम में हमारी ओर से भी कुछ तो कणा-दाना लगा दो । सारी भलाई तुम्हीं कमा रहे हो । हमें भी तो अपने साथ मिला लो । भविष्य के बैंक में कुछ तो हमारा भी जमा हो जाए । कितने सारे लोग यहां तीर्थ-यात्रा करने आया करेंगे, हमें भी उनका आशीर्वाद मिल जाएगा । हमें कुछ नेकी करता देख हमारे बच्चे भी कुछ भला काम करना सीखेंगे । हमारे और हमारी घरवाली के नाम से और मुन्ना और मुन्नी के नाम से एक-एक लाख रुपया अपनी पोथी में लिख लो । ठीक है ! कर भला तो हो भला।"

इस प्रकार शहर के धनी और दौलतमंद लोग एक-एक करके आते रहे और मंत्रीजी के चौपड़े में कह-कहलवाकर अपने नाम से कुछ दान-पुण्य लिखवाते रहे।

मंत्रीजी उनसे बहुत कहते—"अरे भाई, तुम इतना क्यों सोचते हो ? भगवान ने हमें सब-कुछ दिया है। भरपूर कर दिया है। काम तो हो ही जायेगा । आप अपने पास रखे रखो, किसी अन्य काम में लग जाएगा ।"

परंतु वे लोग कहते—"ना भई, प्राणों का क्या कोई भरोसा है । कल हम होंगे भी, यह कोई किसी ने गारंटी लिख रखी है। बड़े-बड़े भूपति यों ही उड़ गये । इसलिए अच्छे काम में देरी करना मूर्खता है । यह तो जिसकी आधी नीयत देने की आधी न देने की हो, वह ही ऐसे करता है । हमने तो संकल्प कर लिया है, इसलिए हमारा नाम तो पोथी में लिख लो और यह जो हम दे रहे हैं, यह उसी का ही दिया हुआ समझो।"

इस प्रकार जब सब अपनी-अपनी दृढ़ भावना बताते तो मंत्रीजी उनकी नकदी ले लेते और पोथी में उनके नाम से चढ़ा लेते ।

एक दिन एक गरीब मजदूर आया । बोला—"मंत्रीजी, सारे लोग इस धर्म के काम में अपना हाथ डालकर अपना भाग्य बना रहे हैं । मंत्रीजी, हम तो गरीब आदमी हैं, रोज़ की कमाई से मुश्किल से ही परिवार का पेट पालते हैं । परिवार में एक हमारी ही कमाने की ड्यूटी है, बाकी घर में या तो बच्चे या बूढ़े और या फिर महिलाएं हैं । परंतु हम सभी ने सोचा कि यह जो धर्म कार्य हो रहा है, उसमें शामिल होने से हम भी क्यों वंचित रहें। अत: हमने भी पैसा-पैसा प्रतिदिन इकट्ठा करना शुरू किया, तब कहीं जाकर सात रुपये इकट्ठे हुए । परंतु जहां साहूकार लोग लाखों रुपये दे रहे हैं, वहां ये सात रुपये तो तिनके के बराबर भी नहीं । इसलिए हमें तो यह कहते हुए ही शरम आती है कि यह भी इस धर्म के कार्य में लगा लो । हमारे मन को चैन तो तभी आयेगा, जब यह भी आप स्वीकार कर लोगे । इसको चाहे आप सुदामा की सूखड़ी समझ लो या गरीब की पोटली। परंतु किसी

काम में लगती हो तो लगा ही लो वर्ना घर में बुढ़िया-बूढ़े को और मुन्ना-मुन्नी को यह रंज होगा कि हम गरीबों का तो लिया ही न ! ये लो मंत्रीजी, यह रख लो, मैं अब चलता हूं । भगवान गरीब-निवाज़ हैं वो जानता है कि गरीब मन से कितना प्यार करते हैं।''

मंत्रीजी का मन यह बात सुन-सुनकर पिघलता जा रहा था, आंखें गीली होती जा रही थीं । मुख से कुछ बोल नहीं निकल रहे थे । वो ललुआ मज़दूर की आंखों में भगवान का प्यार भरा देखकर कुछ सोच रहे थे । ललुआ तो चला गया परंतु मंत्रीजी कुछ देर सोचते रह गये और उन्होंने कच्ची नामावली में उसका नाम लिख लिया। फिर जब उन्होंने पक्की नाम-सूची बनाई तो उसमें ललुआ का नाम सबसे ऊपर लिख दिया ।

जब सेठ साहूकार लोगों ने सूची में केवल सात रुपये देने वाले ललुआ का नाम सबसे ऊपर लिखा देखा तो उनमें से एक ने मंत्रीजी से उसका कारण पूछ ही लिया ।

मुस्कराते हुए वह सेठ बोला—''मंत्रीजी, ऐसा लिखने का भला क्या कारण है ?''

मंत्रीजी बोले—''देखो भई, आप लोगों ने तो अपनी अच्छी-खासी पूंजी में से उसका एक छोटा अंश ही दिया।'' परंतु इस गरीब के पास तो जितनी पूंजी इकट्ठी हुई थी, उसने वह सारी दे दी । उसने उसमें से अपने लिए तो कुछ रखा ही नहीं।

इसी प्रकार परमपिता परमात्मा शिव जब प्रजापिता ब्रह्मा के द्वारा इस कलियुगी संसार के जीर्णोद्धार का कार्य करते हैं तब जो इस कार्य के महत्व को समझते हैं, तब उनमें से कई लोग यथा-शक्ति अपना आर्थिक सहयोग यह सोचकर देते हैं कि इससे उनका भविष्य ऊंचा होगा, कमाई सफल होगी और उनको यह अच्छा काम करते देखकर उनसे छोटे भी कोई अच्छा काम करना सीखेंगे । यों तो परमपिता परमात्मा सर्व समर्थ हैं, वे तो 'दाता' हैं, वे तो किसी को भी निमित्त बनाकर अपना कार्य सम्पन्न कर सकते हैं परंतु हरेक मनुष्यात्मा अपने कल्याण की बात सोचते हुए अपनी कमाई अथवा पूंजी में से कुछ-न-कुछ सहयोग 'विश्व परिवर्तन' के इस श्रेष्ठ कार्य के लिए देते हैं । फिर भी उनमें से जो निर्धन लोग हैं उनका थोड़ा भी सहयोग इस कार्य में धनी लोगों के बड़े सहयोग से अधिक मूल्यवान है। शिव बाबा उसको बहुत मूल्य देते हैं क्योंकि वह अपनी मेहनत की कमाई से, सुदृढ़ भावना के बल से इतना बचा पाते हैं। □□

अम्बाला कैन्ट—ब्र.कु. हृदयमोहिनी जी के पधारने पर विशिष्ट व्यक्तियों के लिये कार्यक्रम रखा गया। दादी जी शिक्षाप्रद उद्गार रखते हुए।

कटक—आध्यात्मिक कार्यक्रम में ब्र.कु. कमलेश प्रवचन करते हुए। साथ में डॉ. अयोध्या महाराज, डॉ. श्याम सुंदर दास और अन्य साधु महात्मा विराजमान है।

प्रसन्नता की जननी-नि:स्वार्थ सेवा

□ब्र.कु. राजेंद्र ललावत, उज्जैन

कहा जाता है कि चिंता चिता के समान है, इसलिए चिंताओं से मुक्त प्रसन्नचित्त रहना चाहिए । स्वेट मॉडर्न ने भी प्रसन्नता को अच्छे स्वास्थ्य का आधार बताया है । प्रसन्नता से शरीर और मन दोनों ही स्वस्थ रहते हैं । मानव स्वभाव से ही प्रसन्नता की कामना करता है, यदि उसे प्रसन्नता प्राप्त नहीं होती है, तो वह अपना जीवन कभी सफल नहीं मानता । प्रसन्नता एक विचित्र विचारक विषय है।

वैसे प्रसन्नता एक मोहक दिव्य गुण है, लेकिन बहुत कम लोग ही इसे प्राप्त कर पाते हैं। आज तो प्रसन्नता लोगों के लिए मृगमरीचिका साबित हो रही है । आज लोगों के चेहरों पर प्रसन्नता नहीं, अपितु चिंता, तनाव एवं भय ही परिलक्षित होते हैं । सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक समस्याओं ने प्रसन्नता को आज के मानव से दूर बहुत दूर कर दिया है । इन समस्याओं के कारण मानव के चेहरे पर प्रसन्नता नहीं, बल्कि इन समस्याओं के कारण दुख के भाव ही नजर आते हैं ।

आज का मानव प्रसन्नता की मंजिल को भौतिकता के रास्ते से प्राप्त करना चाहता है। उसे भौतिक वस्तुओं को प्राप्त कर उनके उपभोग में ही प्रसन्नता का अनुभव होता है, परंतु यह प्रसन्नता क्षणिक ही होती है । धन से कभी कोई प्रसन्नता नहीं खरीद सकता । प्रसन्नता धन से नहीं, अपितु 'आदर्श जीवन' जीने से आती है, संयमित जीवन प्रसन्नता का आधार है । प्रसन्नता का जन्म त्याग, उच्च विचारों एवं परोपकारी कार्यों से होता है। स्वार्थी जीवन बिताने वाले कभी प्रसन्नता को अनुभव नहीं कर सकते, बल्कि स्वार्थी लोग तो दूसरों की प्रसन्नता को भी समाप्त कर डालते हैं ।

अप्रसन्नता का मुख्य कारण ईर्ष्या अथवा असंतोष की भावना है । प्रसन्नता एक ऐसी अनमोल देन है, जो हमारे ही शुभ विचारों एवं निस्वार्थ सेवा से मिलती है । दूसरों को प्रोत्साहन देने, उनका उत्साह बढ़ाने से भी प्रसन्नता मिलती है। जब हम दूसरों के लिए त्याग करते हैं, अथवा किसी के दुख के सहभागी होते हैं, तब भी हमें प्रसन्नता का अनुभव होता है।

प्रसन्नता हम वैसे ही प्राप्त करते हैं, जैसे मधुमक्खी बहुत कठिन परिश्रम करने के बाद शहद प्राप्त करती है। प्रसन्नता को हम अपने ही जीवन के बगीचे में इकट्ठा कर सकते हैं । प्रसन्नता पर किसी का एकाधिकार नहीं होता । सद्कर्मों से इसे प्राप्त किया जा सकता है । परदर्शन, परचिंतन, चिंता एवं भय छोड़कर प्रसन्नता एवं विश्वास की ओर बढ़ना चाहिये, यह मनुष्य को वास्तविकता के निकट लाता है। जीवन में संघर्ष, कठिनाईयां या निराशाएं हमें हताश अथवा निर्बल करने के लिए नहीं, अपितु अद्भुत साहस और शक्ति देने के लिये आती हैं ।

जो लोग साधारण दुख से अथवा विपत्तियों से घबरा जाते हैं, वे राई का पहाड़ बना देते हैं एवं अप्रसन्नता को प्राप्त करते हैं । यदि प्रसन्नता को पाना है, तो दुख की चिंता को छोड़ देना चाहिए । प्रसन्नता पाना ही मानव के जीवन की सफलता है । निश्चिंत जीवन व्यतीत करने वाला सहज ही प्रसन्नता को पाता है और जो मनुष्य वास्तव में जीने की कला जानता है, वही निश्चिंत जीवन व्यतीत करता है।

प्यारे शिवबाबा भी हम ब्रह्मावत्सों को यही शिक्षा देते हैं कि—"प्रश्नों से पार प्रसन्नचित्त रहो।" प्रसन्नता उन्हीं के गले का हार बनती है, जो क्या-क्यों-कैसे रूपी मैल को अपने से दूर, बहुत दूर रखते हैं । □

परमात्मा आत्माओं से अलग हैं और सुख-शान्ति के दाता हैं

आज बहुत-से लोग कहते हैं कि—"आत्मा ही परमात्मा है । वह कहते हैं—"हम आत्माएँ ही शुद्ध हैं, शान्त हैं, आनन्द हैं।" परन्तु वास्तव में यह मान्यता गलत है और इससे बहुत अनर्थ हुआ है ।

आप किञ्चित विचार कीजिये कि एक मनुष्यात्मा को 'शान्त' और शुद्ध किसी अन्य अशान्त और अशुद्ध की भेंट में ही तो कहा जा सकता है ! अतः जो लोग स्वयं को शान्त और आनन्द मानते हैं, उनसे पूछना चाहिये कि अन्य कोई तो अशान्त अवश्य है, तभी तो उसकी भेंट में आप स्वयं को शान्त कहते हैं । इससे सिद्ध हुआ कि आत्माएँ शान्त भी होती हैं और अशान्त भी परन्तु 'परमात्मा' तो उसको कहा जाता है जोकि सदा शान्ति का सागर है । आत्माएँ सदा-शान्त नहीं होतीं । आप ज़रा विचार कीजिये कि यदि आत्मा की स्थिति सदा शान्त होती तो उसे इस स्मृति में रहने का अभ्यास करने की आवश्यकता ही न होती कि मैं शान्त हूँ औ शुद्ध हूँ । अतः सिद्ध है कि आत्मा स्वयं परमात्मा नहीं है क्योंकि परमात्मा सदा पवित्र ओर शान्त है और सुख-शान्ति के दाता हैं ।

"पवित्र जीवन के लिए ईश्वरीय प्रेरणाएं"

□बी.के. सूरजमुखी, आगरा

पवित्रता को सृष्टि पर सभी ने सर्वोच्च स्थान दिया, जिन्होंने सृष्टि पर आकर यदि कोई महान कार्य किया भी है तो अवश्य ही पवित्रता को जीवन का कोई अंग बनाया होगा । एक समय था जब मनुष्यात्मा की सबसे बड़ी चाह थी—पवित्र जीवन । यही उसके जीवन का श्रृंगार थी । आज भी है, परंतु विषय है—पवित्रता की कीमत को जाने । पुनः पवित्रता का सागर हमारा बाप बन हमें बता रहा है, शिक्षक बन समझा रहा है, सतगुरु बन बुला रहा है... अपने पावन बच्चों को । जग को पावन करने वाला तुम्हें पावन बनाने का वायदा दिल से दे चुका है। अतः पावनता के अधिकारी महान आत्माओ ! अब प्रतिज्ञाएं छोड़कर, प्रतिज्ञा के बजाए 'प्रति आज्ञा' को जीवन में उतारने का तुम भी दिल से वायदा करो, पवित्रता का वरदान तुम्हें, जीवन को महान व पवित्र बनाने के लिए ही तो मिला है **जिसने तुम्हारे जीवन को पावन बनाने की गारंटी ली है उसकी ही ये प्रेरणाएं हैं—**

●कभी न भूलो तुम परम पवित्र आत्मा हो, जिसे तुम प्राणों से प्यारा कहते हो, उसका ही ये वरदान है—कि तुम पवित्रता के अवतार हो ।

●तुम्हें याद आता है ? तुम्हीं ने लंबे समय अकेले सृष्टि पर राज्य किया है, तुम स्वराज्यधिकारी रहे हो तुम्हें कौन पराजित कर सकता है—निश्चय बल धारण करो ।

●तुमने विश्व के मालिक को गुप्त रूप में नवयुग रचते पहचान लिया । तुम्हें कोई न पहचाने ये नहीं हो सकता परंतु भगवान की तरह गुप्त निष्काम, निस्वार्थ कर्म करते चलो।

●कांटों से घबराओ नहीं, शूलों को फूल बनाते चलो—परंतु चलो तो सही, **शूल राहों के एक दिन फूल बन जाएंगे, यही कांटे तुम्हें कोटों में कोई बना जायेंगे।**

●तुम्हारे जगे दीपक को कोई तूफान नहीं बुझा सके तो तुम अपने ही तूफानों से क्यों घबरा जाते हो । याद रखो ये काले दुखों के बादल तुम्हारा महत्व बढ़ा रहे हैं ।

●कृष्ण के हाथ में स्वर्ग है, भगवान के हाथों में तुम, कौन अच्छा लगेगा ? तो भी तुम्हें क्यों नशा नहीं रहता । भगवान के आशीर्वाद से दुनिया का भला होता है । वह तुम्हें स्वीकार कर चुका है उसने अपना आशीर्वाद का हाथ तुम्हारे सिर पर रख दिया है, सबका हित चाहने वाला तुम्हें हाथ के नीचे छिपा रहा है—तुम्हारा अहित कैसे हो सकता है ?

●तुमने भगवान के साथ रहना सीख लिया है—अहो भाग्य उनका जिन्हें उसकी याद से सुख मिला, परम भाग्य उनका जिसके साथ से उन्हें परमसुख मिला तो तुम्हारे साथ रहने वालों को तुमसे दुख क्यों होता है तुम भी अपने साथ से सबको सुख देना सीख लो।

●तुम्हारी यादगार का आधार है तुम ईश्वरीय याद स्वरूप (God conscious) रहो। महान लक्ष्य पर पहुंचने का साहस करने वालो, महान कर्त्तव्य करना न भूलो। तुम्हारे महान चरित्र तुम्हारा चित्र बना रहे हैं । चरित्र को ऊंचा बनाये रखो।

●दुनिया ने उस प्रभु से मांग-मांगकर अपनी झोली भर ली है और तुम्हें उसी ने सारे अधिकार सौंप दिये, भंडारे खोल दिये हैं तुम फिर भी सफल क्यों नहीं कहला रहे हो—एक बार दोहराओ अपने प्राप्त अधिकारों को।

●जग का पालनहार तुम्हारी पालना करने के लिए अपना धाम छोड़कर आया है और तुम्हें ५००० वर्ष की पुचकार इकट्ठी दे रहा है, चार युगों का प्यार एक मिलन में दे रहा है। तो तुम्हें कितना हष्ट-पुष्ट, हर्षित रहना चाहिये ।

●तुम्हें भगवान ने स्वयं आकर कहा है—तुम मेरे नयनों का नूर हो और तुम कह रहे हो—हम तो अभी बहुत दूर हैं—नूर दूर नहीं होते । दूर रहने वाला स्वयं समीप आया है तब तो तुम्हें बताया है तुम मेरे नयनों के नूर हो—सदा अपने स्वमान के आसन पर विराजमान रहो ।

●ओह ! तुमने पहली बार में विश्व के मालिक पर विश्वास किया । जग तुम पर भी करेगा। कोई तुम्हें जाने, ये भी सोचना छोड़ दो । तुमने तो जानीजाननहार को जान लिया है । जग तुमको न जाने ये हो ही नहीं सकता ।

●तुम्हारी खुशी संसार के सारे गम हर लेगी। तुम खुशियों के सागर की लहरों में लहराते रहो।

●तुम धैर्यता धारण करो, तब सबके कष्ट हर सकोगे, तुम्हारे ही कष्ट रह गये तो संसार को सुखी बनाने का वायदा कल्पना बन जायेगा। तुम सब पर सुख बरसाओ तो कल विश्व ही अपना बन जायेगा।

●अपनी महानताएं जहां जाओ साथ ले जाओ। किसी भी श्रीमत पर अपनी कीमत न भूलो, बल्कि महान प्राप्ति के लिए जो दिया जाये देते चलो परंतु अपनी महानताएं न भूलो। धारणाएं न छोड़ो।

●तुम परम-पवित्र आत्मा हो—जैसे आंखों का काम है Natural देखना। ऐसे ही तुम्हारी हर कर्मेन्द्रिय का कर्म ज्ञान-दान, योगदान, स्नेहदान सहयोगदान, शक्तिदान बन जाये। बस, तुम महादानी महाज्ञानी व वरदानी बनो।

●तुमने विश्व को चुनौती (Challenge) दे दिया हमें कोई हमारे रास्ते से बदल (Change) नहीं सकता। तुम अटल रहो, लोग आशीर्वाद देंगे, तुम सफल रहो।

●तुम कह चुके हो, तुम्हें पाकर के हमने जहां पा लिया है—'अब जहान में क्या ढूंढ़ रहे हो, और क्या पाना चाहते हो—सबको राह दिखाने वालो स्वयं भी उन्हीं राहों पर चलते रहो जिनको तुमने स्वयं अपनाया है।

●धर्मों की दीवारों को तोड़ने वालो, वेदों के भेद खोलने वालो, शास्त्रों का अर्थ जानने वालों अब अपने मन की सूक्ष्म दीवारें भी तोड डालो। मान-अपमान, तेरे-मेरे के भेद मिटा दो, तुम्हें जो कुछ मिला है, सेवार्थ लगा दो तो तुम्हें ८ की माला में आने से कोई रोक नहीं सकता। दुनिया के रोके तुम नहीं रुके, ८ की माला में आने से भी न रुको।

तो आइए, एक बार फिर वरदाता के वरदानों को याद करें, जिसने हमारा जीवन पावन बनाया उसको ही पवित्र जीवन की अमूल्य सौगात भेंट करें। ईश्वरीय जीवन को पवित्रता से सजाते चलें कि जल्दी ही पवित्रता का झंडा हर दिल पर लहराए। जिसने हमें पावन बनाया उसकी ही ये प्रेरणाएं हैं—परम पवित्र बने, योगी बनें कि पुनः पवित्र ईश्वरीय जीवन जीने वालों की जय-जयकार हो उठे। □

दिल्ली (पटेल नगर)—आध्यात्मिक प्रदर्शनी का अवलोकन करने के पश्चात् भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान नयी दिल्ली के डीन ब्र.कु. शुक्ला तथा अन्य भाई-बहिनों के साथ में खड़े हैं।

गीत

सतयुग के, राही रे, रुकना नहीं-नहीं।
रूद्रयज्ञ, सिपाही रे, रुकना नहीं-नहीं।।

चाहे माया की, आंधी आये, चलता चल दीवाने।
तुझे अकेला ही चलना है, सुन ले ओ मस्ताने।।
सिर पर गठरी, मंज़िल भारी, झुकना नहीं-नहीं।
सतयुग के, राही रे, रुकना नहीं-नहीं।।

गहरी नदिया, नाव पुरानी, पार तुझे है जाना।
सद्‌गुरु तेरा, मांझी है फिर, मत रे तू घबराना।।
पार लगाना, काम है उसका, चूकना नहीं-नहीं।
सतयुग के, राही रे, रुकना नहीं-नहीं।।

रुकने का, ये समय नहीं है, बढ़ते ही तुझे जाना।
पवन पुत्र, तू है शिवशक्ति, कदम नहीं लड़खड़ाना।।
कितने ही रोड़े, पथ में आयें, गिरना नहीं-नहीं।
सतयुग के, राही रे, रुकना नहीं-नहीं।।

पीछे से, आवाज़ भी देंगे, तुझको जन-अज्ञानी।
सुनना है, क्या कहती श्रीमत्, पिय की सुमधुर वाणी।।
मुरली धुन पै, चलता चल अब, मुड़ना नहीं-नहीं।
सतयुग के, राही रे, रुकना नहीं-नहीं।।

कल्प-कल्प तेरी जीत हुई है, इसी संगम वेला में।
ऊंची मंज़िल का तू राही, चढ़ अमृतवेला में।।
डबल ताज़ का तू अधिकारी, मूंझना नहीं-नहीं।
सतयुग के, राही रे, रुकना नहीं-नहीं।।

बी.के. एन.एस. सोलंकी, ऋषिकेश

हमारे मित्र

ले.-ब्र.कु. सुधा, शक्ति नगर, दिल्ली

'मित्र' की परिभाषा भिन्न-भिन्न लोगों ने भिन्न-भिन्न शब्दों में की है। अंग्रेज़ी भाषा में इस विषय में किसी ने कहा है कि सच्चा मित्र वह है जो समय पर काम आये। (A friend in need is a friend indeed)। अन्य लोगों ने मित्रों की कई श्रेणियां बताई हैं। एक प्रकार के दोस्त वे हैं, जिन्हें 'खाऊ-पिऊ दोस्त' कहा जाता है। कुछेक को 'मतलबी दोस्त' और कुछेक को 'मौसमी बटेर' (Fair Weather Friends) की संज्ञा दी जाती है। जब तक हमारे पास धन काफी है, हमारा पद ऊंचा है, हमारी पहुंच अच्छे-अच्छों तक है या उनका कोई काम हमसे हो सकता है, तब तक वे हमारे निकट रहते हैं और जब हमारे अपने जीवन में आंधी-तूफान आते हैं अथवा बांके दिन आते हैं तब वे अपना पता ही बदल लेते है, आंखें ही फेर लेते हैं तथा ऐसा प्रकट करते हैं जैसे कि उन्होंने हमें देखा ही नहीं। या पहले से ही अपने ऐसे हालात बताना शुरू करते हैं ताकि हम उनसे किसी बात का तकाज़ा ही न कर सकें।

मित्र के विषय में उपरोक्त सब बातें तो पहले से ही पुस्तकों-पुस्तिकाओं में बताई हुई हैं। प्राय: लोग इन बातों को जानते हैं परंतु फिर भी वे ऐसे दोस्तों से घिरे रहते हैं। कुछ लोग जो कच्ची उम्र (Tender Age) के हैं और जिन्हें ऐसे दोस्तों का अभी कुट अनुभव नहीं हुआ, उन्हें जब कोई वयोवृद्ध अथवा कोई अनुभवी व्यक्ति पहले से ही सावधान करने की कोशिश करता है तो वे अपने संरक्षकों, अभिभावकों या मार्गदर्शकों की बात कम सुनते हैं और उन्हें अपने दोस्तों पर अधिक विश्वास होता है क्योंकि प्राय: ऐसे दोस्त हमारे साथ सहानुभूति करके, हमारी चापलूसी करके अथवा अपनी दोस्ती का दम भरकर अपनी ऐसी घनिष्ठता जताते हैं कि मनुष्य न चाहते भी फुसलाहट में आ जाता है।

परंतु हम जो मित्रता के विषय में कहना चाहते हैं, वह बात ही कुछ और है। वो दोस्ती और दिल्लगी की बातों से एक अलग ही स्तर की बात है। यों तो इस बीसवीं सदी में ऐसी पुस्तकों की कमी नहीं कि हम दोस्त कैसे बनाएं? (How to make Friends?) या हम किसी की दोस्ती कैसे जीतें? (How to Win Friendship?)। परंतु जो बात हम कहने जा रहे हैं, उसका तो दृष्टिकोण ही अलग है और उसके विधि-विधान ही न्यारे हैं।

बात केवल साथ देने की नहीं। अगर केवल साथ देने की बात हो तो कई लोग अपने पालतू कुत्ते को अपना सबसे पक्का दोस्त मानते। परंतु काल के हस्तक्षेप से तो पक्के दोस्त का भी साथ छूट सकता है और समय व परिस्थितियां भी ऐसी हो सकती हैं कि पक्के-से-पक्के दोस्त भी समय पर हम तक न पहुंच सकें।

सच्चा, स्थाई और सदा सहयोगी मित्र कौन है?

अत: मूल प्रश्न यह है कि सदा साथ देने वाला नि:स्वार्थ मित्र कौन है? समय पर सहारा व सहयोग देने वाली स्थाई मित्रता किसकी है? हर प्रकार की परिस्थिति से पार लगाने वाला मित्र कौन हो सकता है? यह प्रश्न एक आध्यात्मिक प्रश्न है अथवा एक दार्शनिक सवाल है जिसका जवाब भी उसी भाषा में समझा जा सकता है।

बहुत थोड़े धार्मिक ही लोग जानते और मानते होंगे कि परमात्मा ही मनुष्य के मन का सच्चा मीत है, वही परममित्र है। खुदा ही मानव का सच्चा दोस्त है। कुछ लोग मुख में अंगुली दबाकर सोचेंगे कि हम यह क्या कह रहे हैं? खुदा तो परम पूज्य है। वह हमें दिखाई भी नहीं देता, हम उससे बात भी नहीं कर सकते, न उससे हमारी गुडमार्निंग होती है न हैंड-शेक तब हम उसे दोस्त कैसे कह सकते हैं? इस प्रकार हमारा कथन अजीब और अद्भुत तो है परंतु निश्चित मानिए कि सत्य भी है। सच्चा, स्थाई, सदा सहयोगी, स्नेह का नाता सदा निभाने वाला मित्र एक परमात्मा ही है। जिसने उसे मित्र या दोस्त नहीं बनाया वही संसार में दोस्तों की तलाश में लगा हुआ है।

संसार में हमारी दोस्ती शरीरधारियों से होती है और शरीर द्वारा ही उनसे मेल-मिलाप, बातचीत और स्नेह-सम्बंध का व्यवहार होता है परंतु परमात्मा जो कि अशरीरी है उससे मित्रता, स्नेह-सम्बंध आदि बुद्धि ही के द्वारा होता है। इस विधि-विशेष को 'योग' कहते हैं। योग से ही सहयोग मिलता है। सहयोग ही श्रेष्ठ प्रकार की सहायता अथवा स्नेह की अभिव्यक्ति है। योग द्वारा परमात्मा मित्र से सहयोग प्राप्त करने में काल, परिस्थिति इत्यादि कोई बाधा उपस्थित नहीं कर सकते।

मित्रता का भाव

पीछे हम नये प्रकार के दृष्टिकोण की बात कह आये हैं। वह दृष्टिकोण योगी का दृष्टिकोण है। योगी किसी भी व्यक्ति को शत्रु नहीं मानता। वह वैर और शत्रुता की वृत्ति ही धारण नहीं करता। एक परमात्मा के साथ मित्रता का नाता जोड़ लेने पर

वह सबको मित्र-भाव से देखता है। कोई स्वयं को इस योगी का शत्रु मानता हो तो यह उसकी भावना हुई परंतु योगी की उसके प्रति ऐसी भावना नहीं होती । यहां तक कि योगी मानता है कि 'निंदा हमारी जो करे मित्र हमारा सो।' योगी की यह भावना स्थाई बनी रहने से कुछ काल के उपरांत शत्रु को भी मित्र में परिवर्तित कर देती है।

विशेष बात यह है कि योगी दुर्गुणों को अथवा काम, क्रोधादि मनोविकारों को ही अपना शत्रु मानता है और पवित्रता, शांति, सदाचार, निर्विकारिता तथा दिव्य गुणों को अपने मित्र मानता है। 'मित्र' की सर्वमान्य परिभाषा यह है कि जो हमारा भला करे, हमारे काम आये, हमें अच्छी राह पर ले जाये, हमें ठीक राय दे, हमारा साथ न छोड़े और हमारे लिए भय उत्पन्न न करे, वह हमारा मित्र है। और यह सारी परिभाषा दिव्य गुणों और पवित्रता पर ही ठीक चरितार्थ होती है । इसके विपरीत शत्रु वह है जो हमारे लिए भय का कारण बने, दुख उत्पन्न करे, हमें गलत राह पर ले जाये और हमें गलत राय दे—यह परिभाषा दुर्गुणों और विकारों पर ही घटित होती है।

अत: हमें दिव्य गुणों और पवित्रता को ही अपना मित्र बनाना चाहिए व दुर्गुणों तथा विकारों को शत्रु जान उनका साथ छोड़ देना चाहिए । और चूंकि परमपिता परमात्मा ही सर्व दिव्य गुणों के भंडार हैं और हमें विकारों से व दुर्गुणों से छुटकारा दिलाने वाले हैं, इसलिए वह ही हमारे परममित्र हैं। □□

ओ तस्वीर बनाने वाले
(कल्पचक्र)

प्रीतमलाल अश्क, पश्चिम विहार, नयी दिल्ली

सतयुग का आनंद दिखाया पूर्ण सुख-वैभव रूहानी,
कंचन सी निरोगी काया दिवस सुनहरे रैन सुहानी।
अमरलोक की जीवन गाथा धर्म-कर्म की अमर कहानी,
लेश-मात्र भी दुखी न कोई नहीं विकारों की मनमानी।
श्री लक्ष्मी नारायण के सिर डबल ताज पहनाने वाले
ओ तस्वीर बनाने वाले.....

त्रेता में श्रीराम दिखाए पहन रहे वैजयंती माला,
घृत दूध की नदियां बहतीं सुख पूर्ण सब अदना-आला।
नंदन वन-सा शोभित भारत जन-जन के मन ज्ञान उजाला,
बकरी जिन घाटों पर विचरे वहीं सिंह शोभे मतवाला।
ऊंच-नीच का भेद न कोई दैवी देव कहाने वाले
ओ तस्वीर बनाने वाले.....

द्वापर की तस्वीर दिखाई इब्राहिम और बुद्ध बनाए,
बन्दर बांट हुई मानुष की ईसा अपना धर्म फैलाए।
महावीर गौरांग प्रभु और स्वामी शंकराचार्य आए,
नानक और मुहम्मद ने भी अपने-अपने पंथ सजाए ।
भाषा जाति धर्म भेद पर जन्मे रक्त बहाने वाले
ओ तस्वीर बनाने वाले.....

खूब दिखाया कलियुग इसमें बने देवता भ्रष्टाचारी,
देश द्रोही कायर कपटी डाकू कातिल चोर भिखारी।
धोखेबाज़ फरेबी ऐबी और घातकी अत्याचारी,
एक ही रंग में रंग गई दुनिया क्या साधु क्या संत पुजारी।
बेमुख ईश्वर से करते हैं सतगुरु आप कहाने वाले
ओ तस्वीर बनाने वाले.....

धर्म ग्लानि हुई जगत में मानुष ने भगवान भूलाया,
ग़म की आंधी लगी बहकने दुखों ने तूफान उठाया।
विषयों और विकारों में सब नर-नारी का मन भरमाया,
त्राहि-त्राहि मची धरा पर चहुं ओर अंधियारा छाया ।
अपने ही घर के दीपक यह घर में आग लगाने वाले
ओ तस्वीर बनाने वाले.....

संगम समय दिखाया इसमें परमपिता ब्रह्मा तन आए,
रावण के पंजे में फंसी सीताओं को आन छुड़ाए।
अमृत वर्षा लगी बरसने उजड़ा फिर संसार बसाए,
सहज ज्ञान और योग सिखा कर फिर से जीवनमुक्त बनाए।
बलिहारी ओ भव सागर से नैया पार लगाने वाले
ओ तस्वीर बनाने वाले.....

पांडव शक्ति सेना ने फिर ज्ञान-अमृत का कलश उठाया,
अंतिम दम तक इन वीरों ने अपना यह कर्तव्य निभाया ।
ज्ञान चिता पर हंसते-हंसते अपना जीवन पुष्प चढ़ाया,
आंधी और तूफानों में भी जरा कदम न रुकने पाया ।
यह परवाने परम ज्योति पर प्रीतम प्राण गंवाने वाले
ओ तस्वीर बनाने वाले..... □

परमात्मा की स्मृति से मोह की निवृत्ति

आजकल बहुत-से लोग मोह को तो विकार ही नहीं मानते। वे कहते हैं कि मोह के बिना तो घर-गृहस्थ चल ही नहीं सकता। परन्तु जो मनुष्य ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त करता है, वह जानता है कि मोह से दुःख होता है और कि मोह के स्थान पर शुद्ध प्रेम होना चाहिये और कि मनुष्य को अपने गृहस्थ के कर्तव्य तो पालन करने चाहियें परन्तु स्वयं को ममता में नहीं जकड़ना चाहिये बल्कि जैसे परमात्मा सारे संसार का पिता होते हुए भी और प्यार का सागर होते हुए भी सबसे न्यारा तथा निर्मोही भी है, उसी प्रकार हम को भी स्नेह-युक्त होते हुए भी ममता में नहीं फँसना चाहिए।

अतः यदि कभी उसके पुत्र अथवा मित्र-सम्बन्धी उससे मिलते समय मोह के आँसू बहाते भी हैं और उसका मन भी मोह से प्लावित होने लगता है, तो ईश्वरीय ज्ञान का मंथन उसके मन में चलने लग जाता है। वह सोचता है कि मैं तो मोह में डूबता जा रहा हूँ अर्थात् विषय-वैतरणी में गिर रहा हूँ। उसे स्मृति आती है कि यह तो गोया मैं मोह की जंजीरों में जकड़ा जा रहा हूँ जिन्हें फिर तोड़ना बड़ा कठिन होगा और कि इनके कारण मुक्ति तथा जीवन-मुक्ति की प्राप्ति से भी वञ्चित रहना पड़ेगा। इस प्रकार ज्ञान का मनन करते हुए वह परमपिता परमात्मा ही को अपना माता-पिता, बन्धु, सखा आदि सर्वस्व मानकर पुनः उसकी स्नेह-स्मृति में टिक जाता है अर्थात् "नष्टो-मोहः और स्मृतिर्लब्धा" हो जाता है। अन्य सभी की ओर से उसकी बुद्धि हट जाती है। वह एक नर्स (nurse) की भाँति बाल-बच्चों का पालन-पोषण आदि कर्तव्य तो निभाता ही है परन्तु उसमें लिप्त नहीं होता। इस युक्ति से वह इस जीवन में भी शान्ति का अनुभव करता है और भविष्य में भी २१ जन्मों के लिए मुक्ति और जीवन-मुक्ति का ईश्वरीय जन्म-सिद्ध अधिकार प्राप्त कर लेता है।

बैकुण्ठ की प्राप्ति क्यों नहीं होती

मनुष्य जब तक एक जगह को न छोड़े तब तक वह भला दूसरी जगह कैसे जा सकता है? इसी प्रकार, जब तक मनुष्य का मन इस संसार से न उठ जाए तब तक वह भला बैकुण्ठ या परमधाम की यात्रा पर कैसे रवाना हो सकता है? स्पष्ट है कि वह नहीं जा सकता।

ध्यान देने पर आप मानेंगे कि आज मनुष्य का एक पाओं तो इस संसार के खूंटों से बंधा हुआ है और दूसरे से वह बैकुण्ठ जाना चाहता है—यह तो व्यर्थ ही प्रयास है! मनुष्य एक ओर तो श्रीकृष्ण से स्नेह करता है और बैकुण्ठ में जाने की चेष्टा करता है और दूसरी ओर वह काम, क्रोध, लोभ मोह तथा अहंकार की मजबूत रस्सियों से इसी कलियुगी संसार ही से जकड़ा हुआ है, अतः सब साधना करने पर भी वह वहीं-का-वहीं खड़ा है और एक अनजान की न्यायीं कहता है कि "पता नहीं जीवन में कोई उच्च प्राप्ति क्यो नहीं होती?" अब परमपिता परमात्मा शिव समझा रहे हैं कि—**"जब तक कलियुगी, विकारी बन्धन नहीं तोड़ोगे और इस अभिप्राय से मुझ एक निराकार ज्योतिस्वरूप परमपिता से नाता नहीं जोड़ोगे तब तक बैकुण्ठ के सुखों की प्राप्ति हजार प्रयत्न करने पर और लाख हाथ-पाओं मारने पर भी असम्भव ही रहेगी। सतयुगी सृष्टि अथवा बैकुण्ठ समीप होते हुए भी तब तक आप से दूर रहेगा जब तक कि अपने को विकारों के पंजे से नहीं छुड़ाओगे।"**

सहज राजयोग के अभ्यास की विधि

□ले- ब्रह्माकुमारी शांता, बीकानेर

कई लोग पूछते हैं कि—''हम योग का किस विधि अभ्यास करें ? हम अपना ध्यान कहां टिकाएं अथवा अपना मन कैसे एकाग्र करें ? हम कौन-सा मंत्र याद करें ? क्या हम माला या किसी मूर्ति आदि का भी आधार लेवें ?'' वास्तव में लोगों के ये प्रश्न इसलिए उठते हैं कि अब तक जो 'गुरु' या आचार्य योग सिखाते आये हैं, वे योगाभ्यास के लिए किसी-न-किसी मंत्र या चित्र (मूर्ति) का प्रयोग बताते रहे हैं । परंतु परमपिता परमात्मा जो सहज राजयोग सिखाते हैं, उसके लिए इन सब की आवश्यकता नहीं है।

साधारण विवेक वाला मनुष्य भी इस बात को मानेगा कि अपने किसी प्रिय तथा निकट सम्बंधी को याद करने के लिए मनुष्य को किसी मंत्र-जप, प्राणायाम, माला या मूर्ति की आवश्यकता नहीं होती बल्कि **उसके प्रिय की मूर्ति तो उसके मन में हरदम होती है और वह तो प्रेम रूपी मंत्र से मुग्ध होता है। अपने पिता की याद के लिए तो छोटा बालक भी पिता की मूर्ति का प्रयोग नहीं करता और किसी विशेष आसन पर नहीं बैठता । अतः वास्तव में तो परमपिता परमात्मा की याद की विधि का भी प्रश्न नहीं उठता क्योंकि परमात्मा ही तो हम सब आत्माओं का परम सम्बंधी तथा मन का सच्चा मीत है।** वह ही तो हमारा कल्याण करने वाला तथा पतितों को पावन करके गति और सद्गति करने वाला है । अतः उससे प्रीति जुटाने की विधि तो पूछने की आवश्यकता ही नहीं होनी चाहिए क्योंकि सुख और शांति से तो हरेक मनुष्य की प्रीति है और सम्पूर्ण सुख तथा शांति का दाता अथवा भंडार तो एक परमात्मा ही है जिसकी ओर हमारा मन स्वतः ही जाना चाहिए । परंतु आज चूंकि मनुष्यात्मा को अपने उस परमपिता का परिचय नहीं है और यह भी यथार्थ बोध तथा पूर्ण परिचय नहीं है कि परमात्मा मनुष्यात्माओं को सदाकाल के दुख तथा अशांति से छुड़ाकर पूर्ण सुखी कर देता है। इसलिए उसका मन व्यर्थ चिंतन करता है और भूखों अथवा भूले-भटके मुसाफिरों की न्यायीं कभी इधर तथा कभी उधर जाता है।

परंतु जब मनुष्य को यह ज्ञान हो जाता है कि परमात्मा का नाम **'शिव'** है, दिव्य रूप **'ज्योतिर्बिंदु'** है, दिव्य धाम **'ब्रह्मलोक'** है और वह ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकर के भी रचयिता तथा हम सभी आत्माओं के **'परमपिता'** हैं तो उसका मन स्वतः ही उनकी स्नेह-स्मृति में ऐसे स्थित हो जाना चाहिए जैसे किसी आशिक का मन अपनी माशूका (प्रियतमा) की स्मृति में एकटिक हो जाता है और वह उस तन्मयता की स्थिति में स्वयं को उससे मिलता तथा उससे बातें करता हुआ अनुभव करता है । इस प्रकार, चलते-फिरते,उठते-बैठते परमात्मा की स्मृति से मनुष्य के जन्म-जन्मांतर के विकर्म दग्ध होंगे और वह पवित्र, हर्षयुक्त तथा विवेकयुक्त जीवन व्यतीत करते हुए अंते परम सिद्धि को प्राप्त कर लेगा ।

परंतु फिर भी योग की अग्नि को तीव्र रूप में प्रज्ज्वलित करने के लिए, प्रभु-मिलन के आनंद खूब लूटने के लिए,योग की अधिकाधिक शक्ति को शीघ्रतिशीघ्र प्राप्त करने के लिए,संस्कारों को बदलने और कर्म-बंधनों को जल्दी काटने के लिए तथा अपनी योगावस्था को अधिकाधिक परिपक्व करने के लिए मनुष्य को विशेष रूप से भी योग का अभ्यास करना चाहिए । इस मनोरथ वाले प्रारंभिक कोटि के योगाभ्यासियों को जिस प्रकार योग का अभ्यास करना चाहिए, अब हम उसकी थोड़ी रूपरेखा प्रस्तुत करेंगे ।

सबसे पहले तो मनुष्य को यह संकल्प करना चाहिए कि मैं इस देह से भिन्न, एक ज्योतिर्बिंदु अविनाशी एवं चेतन शक्ति हूं । मेरा स्वधर्म शांति है और आदि स्वरूप पवित्र तथा कर्मातीत है। फिर मन को इस सृष्टि के ऊपर, ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकरपुरी से भी ऊपर, परमधाम ले जाना चाहिए जहां पर कि सुनहरी लाल ब्रह्म तत्त्व है अर्थात् फैला हुआ एक सूक्ष्मातिसूक्ष्म, दिव्य तथा अचेतन प्रकाश तत्त्व है और संकल्प करना चाहिए कि—''वास्तव में तो मैं इस ब्रह्मलोक का वासी हूं । इस अखंड ज्योति वाले धाम से ही उतरकर मैं आकाश तत्त्व में सृष्टि-मंच पर आया और यहां मैंने प्रकृति का शरीर लेकर जन्म-जन्मांतर अपना पार्ट बजाया परंतु अब तो मुझे पुनः विकर्मातीत अवस्था में टिकना है । मैं तो वास्तव में इस देह से न्यारा हूं और इसके लिए अपने पवित्र तथा शांत स्वरूप में स्थित होना है।'' ऐसे मनन करते-करते मनुष्य को ब्रह्मलोक के वासी परमपिता परमात्मा की **स्मृति में स्थित** हो जाना चाहिए कि—''परमात्मा मेरे परमप्रिय परमपिता हैं । वह

ज्योतिस्वरूप हैं और मुझे सुख तथा शांति का स्वराज्य देने वाले हैं । मैं तो बहुत ही सौभाग्यशाली हूं कि परमपिता परमात्मा से मेरी प्रीति है, उनका मुझे अनंत हर्षकारी परिचय मिला है और अब मैं उनकी मधुर स्मृति के बल द्वारा पतित से पावन बन रहा हूं । मुझ आत्मा के तो सर्व सम्बंध उस परमात्मा ही से हैं । वही मुझ आत्मा के माता-पिता, शिक्षक, सद्गुरु, सखा और बंधु हैं । अब वह मेरा कल्याण कर रहे हैं..." "अहा, मैं त्रिलोकीनाथ, सर्वशक्तिवान परमपिता का अमर पुत्र हूं। मुझे यह रहस्य ज्ञात हो गया है कि मुक्ति और जीवनमुक्ति तो मेरा ईश्वरीय जन्मसिद्ध अधिकार है । अब उन्हीं परमपिता परमात्मा शिव ने मुझे शंख, चक्र, गदा, पद्म रूपी अलंकार दिये हैं और अब मैंने स्वयं परमपिता परमात्मा से ज्ञान सुना है जो कि त्रिकालदर्शी हैं तथा दिव्य बुद्धि और दिव्य चक्षु के दाता हैं।"

इस प्रकार के शुद्ध संकल्पों की सीढ़ी पर चढ़ते-चढ़ते मनुष्य को अनुभव की चोटी पर जाना चाहिए, उस परमपिता के मिलन के आनंद में मग्न हो जाना चाहिए, उससे आती हुई शक्ति की करैंट (Current) जैसे स्वयं आत्मा में आ रही है, उस शक्ति का पुंज होकर एकटिक विकर्माजीत अवस्था का अनोखा रस लेते रहना चाहिए, उस दिव्य प्रकाश की कौंध के प्रभाव की अनुभूति में मस्त हुए रहना चाहिए और प्रेम की तन्मयता तथा स्मृति की एकाग्रता के समुद्र में डूबे रहना चाहिए।

इस प्रकार की स्थिति में यदि अनायास ही मन किसी कारण से पुनः वहां से हट जाए तो उसे पुनः परमपिता परमात्मा के परिचय आदि के मनन-चिंतन में लगा देना चाहिए ताकि स्थिति फिर से स्थूल न हो जाए । मनुष्य को इस प्रकार मनन करना चाहिए कि—"यह संसार तो एक मुसाफिरखाना है । अब इस कलियुगी सृष्टि का तो महाविनाश होने वाला है, अतः इसमें मेरी कोई भी आसक्ति नहीं है, मेरी प्रीति तो अब परमपिता परमात्मा ही से है जो कि मुझे परमधाम तथा बैकुंठ में ले चल रहे हैं, मुझे मार्ग प्रदर्शना दे रहे हैं । मेरा वर्तमान जन्म तो अंतिम जन्म है, मैं ८४ जन्म लेकर अब अपना पार्ट पूरा कर चुका हूं, अब तो मेरा पार्ट स्वयं परमपिता परमात्मा शिव के साथ है। परमात्मा शिव तो अवढ़र दानी और भोले भंडारी हैं, उन्होंने मुझे ज्ञान तथा योग रूपी वरदान दिये हैं जिनसे कि सभी प्राप्तियां हो जाती हैं । शिवबाबा, आप तो सचमुच बड़े हितैषी एवं अपार सुख-शांति देने वाले हैं, अतः मैं आपको हृदय से बहुत ही प्यार करता हूं । आप तो बिगड़ी बनाने वाले और माया की गहरी नींद में सोये हुओं को जगाने वाले हैं । मुझे भी आप माया की दलदल से निकालकर पावन बना रहे हैं और २१ जन्मों के लिए स्वर्ग के राज्य-भाग्य का अधिकारी बना रहे हैं । आप तो बहुत ही कमाल करते हैं कि एक जन्म में सहज ज्ञान तथा सहज राजयोग द्वारा पतित नर को पूज्य नारायण तथा नारी को पूज्य श्री लक्ष्मी बना देते हैं । अतः मैं आपके उच्च कर्तव्य की कैसे सराहना करूं ? शिवबाबा, अब तो मैं भी दूसरों को आपकी ज्ञान-लोरी सुनाऊंगा, उन्हें माया की नींद से जगाऊंगा तथा आपका मधुर परिचय देकर हर्षाऊंगा ! शिवबाबा, अब मैं कभी भी विकर्म नहीं करूंगा बल्कि आपकी आज्ञानुसार चलकर अपना जीवन श्रेष्ठ बनाऊंगा...।" इस प्रकार मनन-चिंतन करते-करते पुनः एकाग्रतापूर्वक शांति, शक्ति और प्रेम की धारा को धारण करने जैसे अनुभव में समाहित हो जाना चाहिए ।

इस अवस्था में आपको ऐसा मालूम होगा जैसे कि पवित्रता, प्रकाश, प्रेम, शक्ति और शांति की तरंगें आप पर उतर-उतरकर, आपके माध्यम से सारे संसार में फैल रही हैं और जगत को पावन बना रही हैं । इस प्रकार के अभ्यास का आपकी अवस्था पर काफी समय तक प्रभाव रहेगा । आप देह से न्यारे, वायु के समान हल्के, आत्मिक शक्ति से युक्त, हर्ष और आनंद से विभोर, ईश्वरीय स्मृति की मस्ती में चूर अनुभव करेंगे । दूसरों के प्रति आपके मन में सहानुभूति, स्नेह तथा सौहार्द अनुभव होगा । योग की स्थिति का अव्यक्त अनुभव और आनंद रस आपको बारंबार अपनी ओर आकर्षित करेगा । और आप इस संसार में चलते हुए भी ऐसा महसूस करेंगे जैसे कि आपके पांव इस पृथ्वी पर नहीं हैं, आपकी आंखों में दूसरा लोक बस रहा है, आपकी लग्न अलौकिक है, आपका लक्ष्य ऊपर है, आप देह से निकलते जा रहे हैं और परमपिता के प्रेमपात्र हैं । आपको जीवन में उल्लास का अनुभव होगा और कर्म करते हुए भी थकावट महसूस नहीं होगी तथा हर्ष, शोक, निंदा, स्तुति की परिस्थितियों में भी मन उस परम आनंद की अवस्था को छोड़कर नीचे उतरना नहीं चाहेगा । आपको ऐसा मालूम होगा कि दिनोंदिन आप परमधाम और बैकुंठ के निकट पहुंचते जा रहे हैं और कि आपके पुराने संस्कार अब आपको छोड़ गए हैं तथा अब आप में दिव्य गुणों का तथा पवित्रता का उदय हुआ है । इस प्रकार, आप अपने को बहुत कृत-कृत तथा धन्य-धन्य मानेंगे और आपको योगाभ्यास का चस्का-सा लग जायेगा । आपको जीवन में संतोष रूपी खजाना मिल जायेगा और सहनशीलता की शक्ति भी प्राप्त हो जायेगी ।

इस प्रकार के योग का अभ्यास केवल दिन में एकआध बार नहीं बल्कि बारंबार होना चाहिए और चलते-फिरते, उठते-

(शेष पृष्ठ २४ पर)

अनोखा अखिल भारतीय बाल-युवा आध्यात्मिक शिविर

आज के बच्चे कल के युवा और राष्ट्र-निर्माता हैं । यह वो चमन के फूल हैं जिनकी महक में अद्भुत जादू है। इन नन्हें फूलों का मन उस कोमल कोरे कागज की तरह है, जिस पर अच्छाई वा बुराई दोनों की छाप जल्दी लगती है । इसलिए यह आज के बच्चे समाज में व्याप्त बुराइयों के प्रभाव में आकर अवगुणों वा बुरे व्यसनों का शिकार हो रहे हैं । आज आवश्यकता है तो सही मार्गदर्शन की । बचपन से ही इन्हें स्वस्थ, नैतिक और आध्यात्मिक वातावरण प्रदान किया जाये। जिससे यह नन्हें फूल भविष्य में एक आदर्श नागरिक अथवा युवा बनें । इन्हें सुदृढ़ नैतिक और आदर्श चरित्र निर्माण कर रहा है प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय । यह विश्वविद्यालय हर वर्ष मई मास में "आध्यात्मिक अखिल भारतीय बाल-युवा शिविरों" का आयोजन कर रहा है । प्रतिवर्ष की भांति इस बार भी इस शिविर का आयोजन राजस्थान के गवर्नर बसंत दादा पाटिल जी तथा मुख्य प्रशासिका दादी प्रकाशमणि जी तथा सिरोही ज़िले के कलेक्टर रोहित ब्रांडन जी वा अन्य गणमान्य व्यक्तियों की उपस्थिति में सम्पन्न हुआ । बसंत दादा व अन्य गणमान्य व्यक्तियों के प्रवचनों का सार यही था कि अगर बच्चों को ऐसी सुंदर नैतिक शिक्षा दी जाये तो विश्व की कई समस्याओं का समाधान हो सकता है।

"If you care the child you can care the entire world." अगर इन्हें ऐसा शांतिमय वातावरण प्रदान किया जाये तो इनमें अवश्य परिवर्तन होगा । दादी जी ने भी इसी बात पर जोर दिया कि अगर आज के शिक्षा पाठ्यक्रम में नैतिक शिक्षा का एक विषय रखा जाये तो इससे समाज का सुधार अवश्य होगा । विभिन्न स्थानों से आये हुए गणमान्य व्यक्तियों ने कहा कि यह विश्वविद्यालय ही एक ऐसी संस्था है जो बच्चों के नैतिक उत्थान में कार्यरत है । इस विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित ऐसे सुंदर बाल-युवा शिविर की सभी ने सराहना की तथा आयोजक संस्था को बधाई दी ।

माउंट आबू की मनोरम अरावली पहाड़ियों के मध्य प्रकृति की गोद में बसा यह विश्वविद्यालय पिछले पचास वर्षों से हर वर्ग के लिए आध्यात्मिक मार्गदर्शन कर रहा है । हर वर्ष की तरह इस बार भी इस बाल शिविर का प्रारम्भ २६ मई से हुआ, जिसमें आठ से अठारह वर्ष के लगभग १२०० बालक-बालिकाओं ने भाग लिया । स्वच्छ श्वेत वस्त्रधारी यह बच्चे अलौकिक फ़रिश्तों की भांति प्रतीत हो रहे थे, जिन्हें इस मधुबन स्वर्ग भूमि से विश्व में शांति और शक्ति की किरणें फैलाने के लिए संगठित किया हो । हरेक बच्चे के मुख कमल से दृढ़ आत्मविश्वास, शांति और निर्मल आत्म-स्नेह की झलक देखकर ऐसा लग रहा था कि यह हमें मौन की भाषा में कह रहे हों कि क्या हम किसी से कम हैं ? हम चाहें तो विश्व को बदल सकते हैं ।

आइए, इनकी व्यवस्थित दिनचर्या पर नज़र डालें । यहां इस शिविर का आयोजन सुंदर और व्यवस्थित दिनचर्या को लिए हुए है, उसमें हर उन विषयों का समावेश किया गया है, जिससे कि बच्चों का पूर्ण नैतिक विकास हो । अनुभवी विद्वान, शिक्षाविदों और आध्यात्मिक क्षेत्र के अनुभवी भाई-बहनों द्वारा निम्नलिखित विषयों पर सुंदर प्रकाश डाला गया:—

● शिविर का लक्ष्य एवं प्राप्ति, नैतिक एवं आध्यात्मिक शिक्षा का महत्व, राजयोग में स्वच्छता और स्वास्थ्य का महत्व, विश्व नाटक में २१वीं सदी का भारत, राजयोग में आत्मा और परमात्मा का स्थान, आध्यात्मिकता द्वारा विश्वशांति और अनुशासन की शक्ति, समाजसेवा में ईश्वरीय विश्वविद्यालय की प्रवृत्तियां, विश्वशांति में बच्चों का कर्त्तव्य व दिव्यगुणों की धारणा आदि महत्वपूर्ण विषयों पर व्यवहारिक प्रकाश डाला गया।

● इसके अतिरिक्त इस कार्यक्रम में वक्तव्य स्पर्धा, भाषण और सांस्कृतिक कार्यक्रमों में गीत, ड्रामा, डांस आदि द्वारा अपने मनोभावों को प्रकट कर एक दिव्य वातावरण प्रस्तुत किया । इस सप्ताह के शिविर में यह बच्चे वह सब आध्यात्मिक पहलू अपने जीवन में प्राप्त करते हैं और अपने जीवन में अनोखे परिवर्तन का अनुभव करते हैं जिसे सिखाने में आज की भौतिक शिक्षा व शिक्षा का पाठ्यक्रम असमर्थ प्रतीत होता है । यहां यह बच्चे अपनी दैनिक दिनचर्या में दुनियावी अनैतिक वातावरण से दूर सुबह ४ बजे प्रकृति के सुंदर और शांत वातावरण में उठकर सर्वप्रथम उस परमपिता शिव से गुडमार्निंग

करते हैं । सुबह के निर्मल वातावरण में प्रभुमिलन उनमें अनोखी शक्ति भरता है। उसके पश्चात् वह प्रकृति भ्रमण एवं व्यायाम का भी पूरा ध्यान रखते हैं । फिर ६.३० से ७.३० तक परमात्मा के मधुर महावाक्य मुरली के रूप में सुनते हैं । दिन में ९.३० से ११.३० व शाम को ५ से ६ तक विभिन्न आध्यात्मिक व राजयोग से सम्बंधित विषयों पर इन्हें क्लासें मिलती हैं । रात को दैनिक चार्ट को पूरा कर पिता से प्रभुमिलन मनाते गुडनाइट कर विश्राम करते हैं ।

● इन आयोजनों में महत्वपूर्ण सहयोग व प्रेरणा रहती है । यहां की मुख्य प्रशासिका दादी प्रकाशमणि जी तथा राजयोग फाउंडेशन के सचिव भ्राता निर्वैर जी तथा विश्वविद्यालय के प्रमुख प्रवक्ता भ्राता जगदीश जी तथा अन्य बड़े अनुभवी भाई-बहनों ने इस कार्यक्रम को सफल बनाने में योगदान दिया ।

● इस सप्ताह के शिविर में विभिन्न कार्यक्रमों व गतिविधियों में जिन भारत के प्रमुख स्थानों से आए हुए अपनी विशेष योग्यताओं के आधार से ३०० बच्चों को प्रमाणपत्रों के साथ विशेष पुरस्कार दिये गये तथा अन्य सभी को प्रमाणपत्र देकर प्रोत्साहित किया गया। □

(पृष्ठ २२ का शेष)

बैठते भी अपनी अवस्था पर ध्यान होना चाहिए । यदि दिन भर आप इसका अभ्यास नहीं करेंगे तो फिर विशेष रूप से योग में बैठने में भी शीघ्र सफलता नहीं मिलेगी । अत: मनुष्य को चाहिए कि कर्म करते हुए भी मन को उस परमपिता परमात्मा की स्मृति की टेर डाले ताकि उसकी अवस्था फिर स्थूल न हो जाये और देह-अभिमान के कारण फिर विकर्म न हो तथा समय और जीवन व्यर्थ न जाए।

समय थोड़ा है और पुरुषार्थ बहुत करना है

परमपिता परमात्मा शिव ने समझाया है कि सृष्टि का महाविनाश होने में समय बहुत थोड़ा है और किसी भी व्यक्ति का जीवनांत तो उससे भी पहले हो सकता है। परंतु हम आत्माओं पर विकर्मों का बोझ बहुत अधिक है। ६३ जन्म के विकर्मों का खाता हमें योगबल द्वारा दग्ध करना है। अत: अब अधिकाधिक समय इसका अभ्यास करना चाहिए ताकि मनुष्यात्मा तमोप्रधान से सतोप्रधान बनकर पुन: अपने गंवाए हुए राज्य-भाग्य को प्राप्त कर सके। □

(पृष्ठ २८ का शेष)

शांति—हां ! क्योंकि आज हर मनुष्य आपकी उपस्थिति से परेशान है । क्योंकि आप जहां होते हैं उस घर में तो आपकी प्रचंड अग्नि के कारण पानी के घड़े तक सूख जाते हैं । फिर कोई क्यों आपको अपने पास रखना चाहेगा ?

क्रोध—शांति बहन । एक बात बताइए ? मैं तो अपना बेरिया-बिस्तर बांधकर चला जाना चाहता हूं पर ये सृष्टि पर रहने वाले मनुष्य मेरे मोह पाश में इतना जकड़े हुए हैं कि मुझे छोड़ने को ही तैयार नहीं हैं ।

शांति—अब तो ईश्वरीय ज्ञान और राजयोग द्वारा मानव मात्र को मेरी उपस्थिति का अहसास हो रहा है । अब उन्होंने जान लिया है कि मेरे बिना तो यह जीवन नर्क समान है और ईश्वर द्वारा सिखाए गए राजयोग के द्वारा अपना सर्व सम्बंध शांति के सागर परमपिता परमात्मा से जोड़कर शांति की शक्तिशाली अनुभूति कर रहे हैं । अत: अब तो आपका विदाई समारोह होने ही वाला है। □

मंदसौर चरित्र निर्माण आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन मनासा विधायक भ्राता नरेंद्र कुमार जी दीप प्रज्ज्वलित कर, कर रहे हैं।

जगदलपुर—आदिवासियों के आध्यात्मिक गुरु बाबा बिहारीदास जी को विश्व नवनिर्माण आध्यात्मिक प्रदर्शनी का अवलोकन कराती हुई ब्र.कु. किरण जी।

"कहीं आप निराशा के शिकार तो नहीं?"

ब्र.कु. आत्म प्रकाश, आबू पर्वत

जैसे घोर अंधकार में मनुष्य भयभीत होकर दुखोत्पादक भावना के भंवरजाल में फंस जाता है ऐसे ही जब मन पर निराशा का अंधकार छा जाता है तो मन साहसहीन बनकर अनेक मानसिक रोगों के चंगुल में फंसकर पीड़ित होने लगता है, जिससे स्वास्थ्य भी छिन्न-भिन्न हो जाता है । तो आओ... हम सभी मिलकर विचार करें कि निराश मन में आशा का दीपक जगाकर कैसे जीवन को स्थाई सुखदाई बनाएं । तो यहां प्रस्तुत है मनीष और मनोज की पारस्परिक ज्ञान-चर्चा।

आज मनीष का चेहरा एकदम मुरझाया हुआ दिखाई दे रहा था । गम और चिंता के कारण माथे पर गहरी सलवटें खिंची हुई थीं। । आंखों में तेज और होठों पर मुस्कराहट की कमी महसूस हो रही थी । निराशा के अंधकार में अनेक ठोकरें खाकर थका हुआ मनहूस मनीष अपने कमरे में कुर्सी पर लेटा हुआ था । इतने में उसके परमस्नेही मित्र मनोज का कमरे में आना हुआ।

मनोज—(गंभीरता में)—क्यों मनीष, आज कुछ उदास नज़र आ रहे हो, क्या कुछ तकलीफ है?

मनीष—(खिन्नता से)—मनोज भैया, तकलीफ तो कुछ नहीं, मैं समझता हूं कि शायद मेरी फूटी तकदीर में ही उदास रहने को लिखा है।

मनोज—(मुस्कराते हुए)—मनीष, तकदीर को दोष देकर उदासीनता को सहते रहना क्या यह आपको शोभा देता है?

मनीष—नहीं भैया, लेकिन कर भी क्या सकता हूं?

मनोज—ये अच्छा नहीं मनीष, तकदीर पर निर्भर रहकर हम पुरुषार्थ-हीन बन जाएं।

मनीष—(उदासीनता से)—लेकिन भैया, जिस भी कार्य में मैं हाथ डालता हूं, मुझे असफलता ही मिलती है । देखो एम.ए. की परीक्षा ३ बार देकर भी पास न हो सका । उसके बाद जब व्यवसाय चालू किया तो उसमें भी घाटा आ गया । ऐसी कई बातें हैं जिनमें मुझे सदा असफलता ही मिली, जिससे मेरा पुरुषार्थ करने से ही मन हट गया । ऐसा लगता है भगवान हमारी सुनता ही नहीं ।

मनोज—देखो मनीष, जो जैसा पुरुषार्थ करता है, उसी अनुसार उसे प्राप्ति होती है । इसमें भगवान को दोष देने से क्या फायदा?

मनीष—भैया, आप कुछ भी कहो, मैं आपके विचारों से सहमत नहीं हूं ।

मनोज—मनीष, कहीं आप निराशा के शिकार तो नहीं?

मनीष—मनोज भैया, निराशा शब्द मैंने कई बार सुना है, इसका वास्तविक अर्थ क्या है?

मनोज—निराशा अर्थात् मन का रोना, खुश-मिज़ाजी अर्थात् मन का हंसना । जिसका मन सदा रोता रहता है, वह अपनी सूक्ष्म शक्तियां खोता रहता है । ऐसे कमज़ोर मन पर चिंता, शोक, भय, असंतोष, ईर्ष्या, परेशानी जैसी मनोविकृत्तियां आक्रमण करती हैं ।

मनीष—हाय भगवान! क्या ये सब निराशा की ही देन हैं । फिर तो मुझे हर हालत में निराशा से मुक्ति पानी होगी ।

मनोज—इतना ही नहीं मनीष, जिसका मन रोता है उसका तन भी रोता है अर्थात् तन भी किसी-न-किसी रोग का गुलाम रहता है । इसलिए निराशा को कभी भी अपने मन के अंदर पनपने नहीं देना ।

मनीष—भैया, कोशिश तो सदा मेरी यही रहती है, फिर भी निराशा मेरे चारों तरफ चक्कर लगाती ही रहती है । जैसे कभी कोई मेरी निंदा करता है, तो मैं जल्दी ही निराश हो जाता हूं। ऐसे समय में क्या करें?

मनोज—मनीष, निंदा करना अवगुण है, परंतु निंदा सुनने की शक्ति धारण करना महावीरता है । इसलिए निंदा सुनकर कभी निराश न हो जाओ । सदा याद रखो कि—"**निंदा जगाती है, महिमा सुलाती है।**"

मनीष—लेकिन भैया, कोई निंदा करके हमें गिराना चाहे तो क्या करें?

मनोज—वस्तुतः किसी की निंदा से हम नीचे नहीं गिरते । यह समझना गलत है कि निंदक हमारे प्रकाश को फैलने नहीं देता । प्रकाश कभी किसी के रोके रुकता है क्या! इसलिए निंदक के प्रति हमारा दृष्टिकोण घृणा का न हो सदा ऐसा समझें—वे हमारे सच्चे सहायक हैं!

मनीष—(उत्सुकता से)—मैया, आपकी प्रभावशाली बातें सुनकर मुझे शक्ति का अनुभव हो रहा है, लेकिन कभी किसी समस्या पर विजय नहीं पा सकता तो निराश हो जाता हूं, ऐसी परिस्थिति में क्या करें ?

मनोज—(धीरज देते हुए)—मनीष, समस्याओं मे विचलित न होना महान पुरुष का लक्षण है । विवेकवान व्यक्ति वही है जो समस्या आने पर न तो स्वयं विचलित होता है, न ही दूसरों को विचलित करता है।

मनीष—मनोज भैया, यह संसार तो समस्याओं का भंडार है, कहां तक हम सामना करते रहें ?

मनोज—मनीष, समस्याओं को समस्या के रूप में नहीं देखो, लेकिन जीवन की उन्नति की सीढ़ियों के रूप में देखो । और समस्याओं का सामना अकेले नहीं, लेकिन सर्वशक्तिवान परमात्मा को साथ लेकर करो तो कभी हार नहीं होगी ।

मनीष—मैया, ऐसा करने के बाद भी अगर हार हो तो क्या करें ?

मनोज—(दृढ़ता से)—मनीष, कभी भी हार होने पर निराश न होओ। हार जीवन का सत्य है, हार जीवन का श्रृंगार है, इसके बिना तुम आगे बढ़ नहीं सकोगे । जीवन के हज़ारों श्रेष्ठ वृत्तांतों को स्मरण करो । अगर कई बार फेल हो चुके हो, तो एक बार फिर दृढ़ता से प्रयास करो ।

मनीष—इसका मतलब क्या हार में भी कल्याण समाया रहता है ?

मनोज—मनीष, जीवन एक खेल है। हार-जीत इसके दो पहलू हैं । यदि हार न हो तो जीत का महत्व ही क्या है ? महावीर कभी हार होने से निराश नहीं होते । याद रखना, आज हार है तो कल जीत अवश्य होगी । सदा समझो, हार हमारे जीत का संदेश लाई है।

मनीष—मैया, कभी-कभी हार होने से मुझे भय लगता है, ऐसा क्यों ?

मनोज—मनीष, भय को जीवन से सर्वथा के लिए निकाल दो । पुण्यात्माओं को भय किस पाप का ? भय मनुष्य को सफल होने नहीं देता।

मनीष—मनोज भैया, आपके इस सुझाव को मैं अपने जीवन में ज़रूर अपनाऊंगा । लेकिन कभी-कभी हम बहुत सेवा करते हैं, परंतु लोग उसका मूल्यांकन और सराहना नहीं करते तो मन निराश होता है । आप तो जानते ही हो कि सराहना अर्थात् मान-शान की भूख प्रत्येक व्यक्ति को होती है।

मनोज—मनीष, मान-शान एक ऐसी रायल माया है जिसके अधीन प्रायः सभी हो जाते हैं । परंतु मान को स्वीकार करने से अहं का जन्म होता है जो हमारे आंतरिक सुख को चुराने लगता है । इसलिए इसकी आशा नहीं रखनी चाहिए ।

मनीष—मैया, बात आपकी बिल्कुल ठीक है, फिर भी...

मनोज—मनीष, यह सत्य है कि इस संगम युग पर महिमा होना श्रेष्ठ भाग्य की निशानी है, परंतु यह महिमा क्षणिक न हो, वह महिमा किसी कारणवश न की गई हो बल्कि **महिमा मनुष्य की योग्यताओं का दर्पण है**। झूठी महिमा, जान-बूझकर की गई महिमा या आगे बढ़ाने के लिए की गई महिमा प्रशंसनीय नहीं है । फिर भी यथार्थ महिमा तो वही है जो भगवान द्वारा हमें दी गई है । इस सम्बंध में ये ईश्वरीय महावाक्य ध्यान में रहें—**''तुम योगी बच्चे सूर्य समान हो, मान-शान के दीपकों से स्वयं को रोशनी क्यों देना चाहते हो।''**

मनीष—मैया, फिर तो इस झूठे मान-शान की इच्छा रखना ही व्यर्थ है।

मनोज—वस्तुतः मान-शान छोटे-छोटे दीपक हैं । मान-शान हमारे लिए सूर्य को दीपक दिखाने जैसा ही है। सच्चा मान हमारा स्वमान है । इसलिए सदा ये महावाक्य याद रखो—**''तुम स्वमान में रहो तो सम्पूर्ण विश्व तुम्हें मान देगा।''** इसलिए इस झूठे मान-शान में अटक न जाओ । तो अकल्पनीय मान तुम्हें प्राप्त होगा।

मनीष—मनोज भैया, आपकी ये मुख्य बातें सुनकर मेरा मन आनंदविभोर हो रहा है । लेकिन सच बताऊं भैया, जब कभी भी मैं कोई कार्य करने लगता हूं तो मुझे संकल्प आता है कि न जाने मुझे सफलता मिलेगी या नहीं ? परिणामतः असफलता को पाकर मेरा अभागा मन सदा निराश रहता है, ऐसी परिस्थिति में क्या करें ?

मनोज—मनीष, किसी विचारक ने कहा है—"Nothing is impossible in this world for human being." और वास्तव में जिस मनुष्य ने बुद्धि-बल से सभी पर अधिपत्य पाया है, उसके लिए कोई भी बात असंभव नहीं है । मनोबल के आधार से ही असंभव को संभव कर सकते हैं । निराशा तो और भी मनोबल को कमजोर बनाती है।

मनीष-वास्तव में भैया, मनोबल की महिमा अकथनीय है।

मनोज—इतिहास में देखो मनीष, आज तक जितने भी महापुरुष इस संसार में होकर गए, उन्हों के पास धनशक्ति तथा जनशक्ति न होने पर भी अपने असीम मनोबल (Will Power)

के आधार से संसार में अनिवर्चनीय परिवर्तन लाया है। आज तक भी उन्हों के नामों की माला लोग जपते रहते हैं।

मनीष—लेकिन भैया, मनोबल को बढ़ाने के लिए हमें कौन-सा पुरुषार्थ करना चाहिए ?

मनोज—वास्तव में मनोबल आत्मविश्वास से बढ़ता है। आत्मविश्वास से आत्मा में जो असीम शक्तियां हैं, वह जागृत होती हैं । लेकिन जब आत्मा को स्वयं पर संशय या शक होता है तो शक्तिवान के बजाए शक्तिहीन अनुभव करने लगती है।

मनीष—भैया, आत्मविश्वास से मनोबल कैसे बढ़ता है ?

मनोज—आत्मविश्वास से हिम्मत और साहस बढ़ता है जो आत्मोन्नति के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है । जैसे-जैसे हम स्वयं को समर्थ समझने लगते हैं तो आत्मा अपनी महानता स्वीकार करती है जिससे मनोबल स्वतः ही बढ़ता है।

मनीष—भैया, हिम्मत हमें कैसे आगे बढ़ाती है ?

मनोज—मनीष, कहावत भी है—"**हिम्मते मर्दा, मदद दे खुदा**", परमात्मा शिव ने हम आत्माओं से वायदा किया है कि अगर आप अपनी हिम्मत से एक कदम आगे बढ़ोगे तो मैं हज़ार कदम आगे बढ़ाने के लिए मदद करूंगा । ये हो नहीं सकता कि हिम्मतवाले को खुदा की मदद न मिले । क्योंकि हिम्मत की परछाईं है—खुदा की मदद ।

मनीष—मनोज भैया, सचमुच आपके प्रेरणादायी बोल सुनकर मेरी हिम्मत बढ़ रही है ।

मनोज—वस्तुतः हिम्मत ही हमारे जीवन का श्वास है, इसलिए हिम्मत नहीं तो जीवन नहीं । चाहे कुछ भी हो हिम्मत नहीं खोना जिससे हमें रोना पड़े । हम ये भूल जाते हैं कि हमें समस्त विश्व की आत्माओं के आशाओं के दीपक जलाने का महान कर्तव्य करना है । हिम्मतवालों के सामने तो निराशा खड़े रहने का साहस भी नहीं कर सकती ।

मनीष—भैया, हिम्मत को और भी आगे बढ़ाने के लिए क्या करें ?

मनोज—मनीष, हिम्मत बढ़ती है साहस-से । इस दुनिया में साहस से बढ़कर कोई दूसरा हथियार नहीं है । इसलिए कभी भी हार या परिस्थिति को देखकर साहस न खो दो । साहस ही हमें उन्नति के शिखर पर पहुंचाता है । इसलिए सदा हमारा साहस आगे बढ़ता रहे इस पर विशेष ध्यान दें।

मनीष—मनोज भैया, क्या साहस को अपनाने से कभी भी असफलता नहीं होगी ?

मनोज—मनीष, साहसी के तो सफलता पैर चूमती है, जिससे वह आत्मा सदा खुशी के झूले में झूलती रहती है । उसके जीवन रूपी बगिया में सुंदर, उमंग-उत्साह, सहनशीलता, धैर्यता, संतोष और आशा के अनोखे फूल खिल उठते हैं ।

मनीष—भैया, आपकी अनुभवयुक्त बातें सुनकर मेरे अंधकारमय निराश मन में आशा की किरण का उदय हो गया है।

मनोज—मनीष, इस विश्व की तथा विश्वपिता परमात्मा की हम पर कई आशाएं हैं । उन आशाओं की पूर्ति करने के लिए हमें आशीर्वाद मूर्त बनकर रहना होगा। चाहे कितने भी व्यक्ति तथा परिस्थितियों द्वारा आंधी-तूफान आएं, फिर भी हमारा आशा का दीपक बुझने न पाए। उसकी ज्योत अखंड जलती ही रहे।

मनीष—(कृतज्ञता से)—मीठे मनोज भैया, किन शब्दों में मैं आपकी महिमा गाऊं, किन भावों में आपके प्रति प्रेम व्यक्त करूं, मेरी समझ में नहीं आ रहा है । आपने तो हज़ारों आशाओं के दीपक जलाकर मेरे अंधकारमय जीवन को प्रकाशमय बना दिया । भैया, ये आपके उपकार...

मनोज—मनीष भैया, ये मेरा उपकार नहीं, ऊपर वाले ज्ञान सूर्य शिव पिता का उपकार है जिसने आकर हमारे शरीर रूपी घर में आत्मा के दीपक जलाए और आत्माओं के दीपकों में अनोखे आशाओं के दीप जलाए । इन दीपकों की रोशनी से ही यह अंधकारमय दुनिया भी सुख शांति की रोशनी से सम्पन्न होगी जिससे उस रोशनी प्रदान करने वाले परमात्मा का नाम भी रोशन होगा। □

बेहरामपुर—'सर्व के सहयोग से सुखमय संसार' कार्यक्रम के अंतर्गत आयोजित सरपंच स्नेहमिलन में बी.के. मंजू ब्लाक चेयरमैन को ईश्वरीय सौगात देते हुए।

"क्रोध को विदाई"

ब्र.कु. शकुंतला, अहमदाबाद

शांति—कहो क्रोध भाई क्या हाल-चाल है ?

क्रोध—आप तो हाल-चाल पूछ रही हो बहन ! सारे भूमंडल पर पूर्व से पश्चिम तक, उत्तर से दक्षिण तक हमारा ही तो साम्राज्य चल रहा है । पर शांति बहन ! आप कुछ उदास नज़र आ रही हो ।

शांति—(मायूस होकर) हां, क्रोध भाई। मेरा तो अस्तित्व ही लोप हो गया है । मैं तो मानव मन की अनबुझी प्यास हूं भैया।

क्रोध—(खिलखिलाते हुए) अरे, शांति बहन ! यह भी कोई जीवन है ? हमें देखो, कितना रोब से रहते हैं । हमारी ताकत तो ज़रा देखो जिससे धरती और आसमान थरथरा रहे हैं । हमारी सूरत के आगे किसी की एक चाल नहीं चल सकती । कोई मेरी लाल-लाल आंखों के सामने टिक नहीं सकता । मेरे दर्शन मात्र से ही कांपने लगता है। (हंसता है)।

शांति—क्रोध भाई, शक्तिशाली तो तुम हो—यह तो मैं मानती हूं । परंतु सुखदायी तो नहीं हो ना ?

क्रोध—अरी बहन ! सुख तो शक्तियों में ही समाया होता है। यदि हमारा शक्तिशाली स्वरूप न होगा तो कमज़ोरी देखकर लोग हमें डराएंगे, दुख देंगे । हमें नुकसान पहुंचाने की कोशिश करेंगे ।

शांति—लेकिन वह शक्ति भी व्यर्थ शक्ति है जो दूसरों को दुखी बनाने के निमित्त बनी है ?

क्रोध—शांति बहन, अगर मैं ऐसा शक्तिशाली और भयानक रूप न रखूं तो आज विद्यार्थी टीचर से पढ़ नहीं सकते । मज़दूर कारखानों में काम नहीं कर सकते । कर्मचारी बॉस की क्या परवाह करते ? और तो और मेरे इस रूप बिना घर में बच्चे भी मां-बाप के सिर पर चढ़ने लग पड़ते हैं । और सबसे बड़ी हैरानी की बात तो शायद तुम जानती भी नहीं हो । यदि मैं ना होता तो ये हाइड्रोजन बम, एटम बम, मिसाइल्स वगैरा कहां से आते ? और फिर हमारे प्यारे भारत देश को दुश्मनों से, बाह्य खतरों से कैसे बचाया जा सकता ? आज भारतवासी निश्चिंत है कि मेरी रचना उन पर किसी तरह की आंच नहीं आने देगी । फिर इससे अधिक सुख भला और कौन दे सकता है ?

शांति—यह मिथ्या-अभिमान अच्छा नहीं होता है, क्रोध भैया । देख लेना इसका परिणाम एक दिन बुरा ही निकलेगा ।

क्रोध—(गुस्से में तमतमाया चेहरा, आंखें निकालकर कहता है) तुम कौन होती हो मुझे शिक्षा देने वाली ? तुम्हारा तो अस्तित्व तक समाप्त हो चुका है और फिर भी मुझे उपदेश देती हो । मैं सृष्टि का मालिक, समस्त जल, नभ, थल मेरी मुट्ठी में हैं। मेरे एक इशारे पर समस्त मानवता भस्मीभूत हो सकती है और...और... (हांफने लगता है... सांस फूल जाता है... गिर पड़ता है। पानी...पानी... मुझे पानी पिलाओ।)

शांति—मैंने कहा था—क्रोध भाई, मिथ्या-अभिमान अस्थाई है । असत्यता, अवास्तविकता तो अल्पकाल की है। अत: आप भी अपना भयंकर रूप दिखाने के बाद अपने वास्तविक स्वरूप में आ गये हो ना ? अब कैसा अनुभव कर रहे हो ?

क्रोध—शांति बहन मुझे माफ कर दो । मैं तो अंधा हो गया था । मेरा यह भयंकर रूप दूसरों के लिए तो बाद में दुखदायी बनेगा, पहले तो मैं ही इससे जलते-जलते बचा हूं। उफ़ ! कैसी भयंकर अग्नि थी वह ! हे भगवान ! मुझे नहीं चाहिए यह साम्राज्य !

शांति—क्रोध भाई, शांति ही तो हमारा मूल स्वरूप है, हमारा स्वधर्म है । इसको भूलकर ही हम यह नकली नकाब ओढ़ते हैं । तो एक दिन वास्तविकता को प्रकट होना ही है। क्योंकि इसका प्रत्यक्ष प्रमाण आज हम देख रहे हैं । यह जो आपकी रचना आपकी उत्पत्ति के कारण निर्माण हुई इसमें भी मानवता को सुख और सुरक्षा का श्वास नहीं बल्कि दुख और असुरक्षा के घेरे में घुटी-घुटी श्वासें ले रही है । लेकिन वह समय भी शीघ्र ही आने वाला है, जब आपका अस्तित्व सृष्टि से विलुप्त हो जायेगा । क्योंकि किसी भी बात की अति और उसका फिर अंत भी होता है । फिर सारी दुनिया पर मेरा एक छत्र राज्य होगा जिसमें सम्पूर्ण सुख, सम्पूर्ण शांति युक्त संसार का अभ्युदय होगा और उसमें आपके नाम तक की भी अज्ञानता होगी ।

क्रोध—शांति बहन । मेरा तो इस दुनिया से प्रस्थान ही सर्व के हित में है।

(शेष पृष्ठ २४ पर)

आध्यात्मिक सेवा समाचार

करीम नगर—हैदराबाद के निकटवर्ती जिला करीम नगर में दस दिवसीय "स्वर्णिम युग मेला सम्पन्न हुआ। मेले का उद्घाटन दादी प्रकाशमणि जी, मुख्य प्रशासिका ब्र.कु.ई. विश्वविद्यालय ने दीप प्रज्ज्वलित कर किया तथा सर्व को ज्ञानघृत द्वारा आत्मिक दीपक जगाकर स्वर्णिम युग में आने का शुभ संदेश दिया। इस अवसर पर स्थानीय नगरपालिका के चेयरमैन मुख्य अतिथि थे। शहर निवासियों के अतिरिक्त आसपास के लगभग ५० ग्रामों से पधारे ६०,००० लोगों ने मेले को देखकर स्वर्णिम युग में आने की प्रेरणा ली। ५५० आत्माओं ने राजयोग शिविर में भाग ले आत्मानुभूति एवं परमात्मानुभूति की। मेले के समाप्ति समारोह में आंध्र प्रदेश के हाउसिंग मंत्री भ्राता राजेशम् गौड़ जी मुख्य अतिथि के रूप में पधारे। मेला देखकर वे बहुत ही प्रभावित हुए तथा ईश्वरीय सेवार्थ स्थान उपलब्ध कराने का वचन भी दिया। □

जालंधर—शहर में दादी हृदय मोहिनी जी के शुभागमन पर एक 'स्नेह-मिलन' का कार्यक्रम रखा गया जिसमें शहर के गणमान्य व्यक्तियों को निमंत्रण दिया गया। इस कार्यक्रम में पंजाब विधानसभा के सदस्य भ्राता ओमप्रकाश दत्त जी ने नगर-निवासियों की ओर से दादी जी का भव्य स्वागत किया। दैनिक समाचारपत्र 'पंजाब केसरी' के सम्पादक ने विश्वविद्यालय की गतिविधियों के सम्बंध में दादी जी का एक विशेष साक्षात्कार लिया जो कि समाचारपत्र में भी प्रकाशित हुआ। □

नांदेड—स्थानीय सेवाकेंद्र की ओर से जीप द्वारा प्यारे शिवबाबा का संदेश जन-जन तक पहुंचाने के लिए एक दस दिवसीय कार्यक्रम बनाया गया। इस कार्यक्रम के दौरान कंधार, मुखेड़ तथा देगलूर तालुके के अंतर्गत १८ गांवों में चित्र-प्रदर्शनी तथा प्रवचनों के द्वारा ईश्वरीय संदेश दिया गया। इस कार्यक्रम से हज़ारों आत्माओं ने ज्ञान से अपने जीवन को श्रेष्ठ बनाने की प्रेरणा ली। इसी प्रकार के कार्यक्रम रखने के लिए कई गांवों से निमंत्रण भी मिले हैं। □

मिर्ज़ापुर सेवाकेंद्र की ओर से शक्ति नगर स्थित एन.टी.पी.सी. के मनोरंजन केंद्र के भव्य हाल में एक सप्ताह के लिए विश्व नवनिर्माण प्रदर्शनी एवं राजयोग शिविर का आयोजन किया गया। प्रदर्शनी का उद्घाटन एन.टी.पी.सी. के डिप्टी जनरल मैनेजर ने दीप प्रज्ज्वलित कर किया। प्रदर्शनी के साथ-साथ रात्रि को गीत, भाषण, प्रोजेक्टर-शो, वीडियो-फ़िल्म के द्वारा भी ईश्वरीय ज्ञान के रहस्यों को स्पष्ट किया गया। कार्यक्रम से आकर्षित हुई जनता के निमंत्रण पर शक्ति नगर में नियमित क्लास आरम्भ कर दी गई है। □

बैंगलोर—दादी चंद्रमणी जी, संयुक्त मुख्य प्रशासिका प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय के बैंगलोर पधारने पर बड़े ही उमंग-उत्साह से उनका स्वागत किया गया। 'शिव शक्ति भवन' का फाउंडेशन स्टोन दादी जी ने अपने कर-कमलों से रखा। योगभट्टी के भी विशेष कार्यक्रम चले, जिसमें ६०० भाई-बहनों ने अच्छे-अच्छे अनुभव किए और सेवाक्षेत्र तथा संगठन में एकता लाने का दृढ़ संकल्प किया। एक प्रैस कांफ्रेंस का भी आयोजन किया गया जिसमें १० समाचारपत्रों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इसके फलस्वरूप वहां के सभी समाचारपत्रों में 'सर्व के सहयोग से श्रेष्ठ संसार' कार्यक्रम का समाचार प्रकाशित हुआ। □

हाथरस—ग्राम सेवा अभियान के अंतर्गत गांव अकराबाद में त्रिदिवसीय आध्यात्मिक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। इसी गांव के आसपास के ५ गांवों में पद्यात्रा द्वारा ईश्वरीय संदेश दिया गया एवं पर्चे बांटे गये। हज़ारों ग्रामीणों ने इस प्रदर्शनी से लाभ लिया। फलस्वरूप ग्राम अकराबाद में १०० आत्माओं की नियमित क्लास भी आरम्भ हो गई है। □

नवरंगपुर—सेवाकेंद्र के तृतीय वार्षिकोत्सव के उपलक्ष्य में आयोजित 'विश्व एकता शांति यात्रा' का शुभारम्भ स्थानीय नगरपालिका के चेयरमैन भ्राता विनायक मिश्रा जी ने शिवध्वजारोहण कर किया। सारे शहर में चैतन्य श्री लक्ष्मी, श्री नारायण की झांकी, आध्यात्मिक सलोगन तथा गीत आदि के साथ परिक्रमा की गई जिसका नगर-निवासियों पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा। फलतः कई आत्माएं सेवाकेंद्र पर आकर ज्ञानयोग को समझने में रुचि ले रही हैं। इस कार्यक्रम का समाचार वहां के दो स्थानीय साप्ताहिक समाचारपत्रों में भी प्रकाशित हुआ। □

रॉयपुर—सेवाकेंद्र की ओर से गुजराती समाज भवन जगदलपुर में एक आध्यात्मिक चित्र-प्रदर्शनी का भव्य आयोजन किया गया जिसका उद्घाटन भ्राता संपतराम जी, संभागायुक्त,

बस्तर ने किया । इस अवसर पर भ्राता एस.के. चावला, ज़िला-सत्र-न्यायाधीश, भ्राता लखबीर सिंह, सहायक कमांडेंट, केंद्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल एवं शहर के अन्य गणमान्य व्यक्ति भी उपस्थित थे । भूतपूर्व महारानी राजमाता हितेंद्र कुमारी देवी तथा आदिवासियों के आध्यात्मिक गुरु बाबा बिहारी दास सहित लगभग ३०,००० आत्माओं ने प्रदर्शनी का अवलोकन कर परमपिता परमात्मा शिव का मधुर परिचय प्राप्त किया । ८०० आत्माओं ने राजयोग शिविर में भाग लेकर आत्मानुभूति की। □

रॉयगढ़—सेवाकेंद्र द्वारा निकटवर्ती नगर जशपुर में प्रथम बार 'विश्व नवनिर्माण आध्यात्मिक प्रदर्शनी' का आयोजन किया गया । प्रदर्शनी का उद्घाटन भ्राता राजकुमार दिलीप सिंह जू देव, जशपुर द्वारा हुआ । इस प्रदर्शनी का ५००० आत्माओं ने अवलोकन कर ज्ञान स्नान किया । फलतः वर्तमान समय १५० भाई-बहन नियमित क्लास में आ रहे हैं । □

त्रिवेंद्रम—स्थानीय सेवाकेंद्र की ओर से वहां के देवी मंदिर के प्रांगण में एक त्रिदिवसीय आध्यात्मिक चित्र-प्रदर्शनी लगाई गयी । मंदिर में दर्शनार्थ आने वाले भक्तों ने खासकर माताओं ने इस प्रदर्शनी को देखकर अपने जीवन में दैवी गुणों को लाने की प्रेरणा ली। □

मंदसौर—सेवाकेंद्र द्वारा प्राथमिक विद्यालय, जनकुपुरा में आयोजित 'चरित्र निर्माण आध्यात्मिक प्रदर्शनी' का उद्घाटन मनासा विधायक भ्राता नरेंद्र कुमार जी नहाटा ने किया । प्रदर्शनी का अवलोकन करने के पश्चात् आपने कहा कि चरित्र-संकट के इस काल में ब्र.कु. ईश्वरीय विश्वविद्यालय का चरित्र निर्माण का यह प्रयास अति स्तुत्य है। इस प्रदर्शनी को अनेक आत्माओं ने देखा तथा पवित्र और योगी बनने की प्रेरणा ली । प्रदर्शनी स्थल पर राजयोग शिविर भी चले। □

बैतूल के समीपवर्ती ग्राम भरकावाड़ी में 'चरित्र निर्माण आध्यात्मिक प्रदर्शनी' व प्रवचनों का साप्ताहिक कार्यक्रम बड़ी धूमधाम से सम्पन्न हुआ । प्रदर्शनी का उद्घाटन गांव के सरपंच भ्राता पटेल साहब ने किया । लगभग २००० आत्माओं ने ज्ञान लाभ लिया । वर्तमान समय गीता पाठशाला के रूप में नियमित क्लास चल रही है। □

सेंधवा—सेवाकेंद्र की ओर से ग्राम बलवाड़ी में 'परमात्म परिचय आध्यात्मिक प्रदर्शनी' का आयोजन किया गया । इस प्रदर्शनी का उद्घाटन वहां के प्रतिष्ठित व्यापारी भ्राता रमेश लढ्ढा जी एवं सरपंच भ्राता राधेश्याम जोशी जी ने किया । इस प्रदर्शनी को लगभग २००० आत्माओं ने देखा । इस अवसर पर प्रवचन आदि का भी कार्यक्रम रखा गया था ।

अम्बाला कैंट—समाचार मिला है कि दादी हृदयमोहिनी जी का आगमन अम्बाला कैंट सेवाकेंद्र पर हुआ । आपके आने पर एक दिव्य ज्ञान गोष्ठी का आयोजन किया गया जिसमें नगर के प्रमुख डॉक्टर्स, वकील, व्यापारी, इंजीनियर्स पधारे थे । प्रमुख अतिथि भ्राता प्रदीप वासवानी, एच.सी.एस. प्रशासक अपने युगल सहित पधारे । दादी जी के दिव्य अनुभवयुक्त महावाक्यों को सुनकर सभी भावविभोर हो गए । सभी ने दादी जी को एक दिव्य शक्ति के रूप में अनुभव किया । इस अलौकिक प्रोग्राम के बाद अनेक आत्माएं सेवाकेंद्र पर पधारकर लाभ उठा रही हैं।

फ़तेहगढ़ (यू.पी.)—सेवाकेंद्र की ओर से लगभग १२ गांवों में प्रवचन एवं 'राजयोग प्रदर्शनी' का कार्यक्रम रखा गया । इस कार्यक्रम की विशेषता यही रही कि प्रत्येक गांव के प्रधान अथवा मुख्य व्यक्ति के द्वारा सारे कार्यक्रम का आयोजन होता था । गांव की आत्माएं बहुत ही श्रद्धा एवं प्रेम से तथा बहुत ही जिज्ञासा के साथ कार्यक्रम देखते एवं सुनते थे । इन गांवों में कई गीता पाठशालाओं की स्थापना भी हुई जहां पर अनेक आत्माएं आकर ज्ञान लाभ ले रही हैं ।

जामनगर में एक उद्योग मेले में कुछ स्टाल लेकर 'विश्व नवनिर्माण प्रदर्शनी' का आयोजन किया गया । प्रदर्शनी के साथ-साथ चेतन देवियों की झांकी का स्टाल भी सजाया गया । इस प्रदर्शनी द्वारा पास के सेवाकेंद्र में योग शिविर का भी आयोजन किया गया । इस कार्यक्रम द्वारा अनेक आत्माओं ने लाभ उठाया ।

ब्रह्मपुर—बड़ा बाज़ार में महान् ठाकुरानी यात्रा के उपलक्ष्य में १० दिन के लिए एक आध्यात्मिक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया । इस प्रदर्शनी को लगभग ८००० आत्माओं ने देखा । इस प्रदर्शनी को देखकर अनेक आत्माएं कोर्स करने के लिए सेवाकेंद्र पर आती रहती हैं ।

बम्बई (गामदेवी)—सेवाकेंद्र की ओर से जगजीवन राम हास्पिटल की कॉलोनी में ३६ डॉक्टरों एवं नर्सों को योग शिविर तथा ज्ञान शिविर कराया गया । इसके पश्चात् इन सभी का स्नेहमिलन सेवाकेंद्र पर रखा गया । इस कार्यक्रम में महाराष्ट्र राज्य की जन स्वास्थ्य मंत्री बहन रजनी सातव जी भी सेवाकेंद्र पर पधारीं और तीन घंटा समय देकर सारा आध्यात्मिक संग्रहालय समझा तथा सभी शिविरार्थियों का अनुभव सुनकर बहुत ही प्रसन्न हुईं । प्रसिद्ध संगीत-निर्देशक भ्राता ओ.पी. नैयर जी सेवाकेंद्र पर पधारकर ईश्वरीय ज्ञान का साप्ताहिक कोर्स कर रहे हैं ।

कटक (तलंगा बाज़ार)—समाचार मिला है कि छतिया में जगन्नाथ संस्कृति की तरफ से एक धर्म- सम्मेलन का आयोजन किया गया था । इस सम्मेलन में ब्र.कु. कमलेश जी को निमंत्रण प्राप्त हुआ था । छतिया, सप्तशैया, कुआंपाल आदि में 'विश्व नवनिर्माण प्रदर्शनी' का आयोजन किया गया । इस प्रदर्शनी को अनेक प्रतिष्ठित साधु-महात्माओं ने देखा तथा लाभ उठाया ।

पटेल नगर (नयी दिल्ली)—सेवाकेंद्र की तरफ से भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नयी दिल्ली के परिसर में जीवन को श्रेष्ठ बनाने वाली 'आध्यात्मिक शक्ति और एकता प्रदर्शनी' का आयोजन किया गया जिसका उद्घाटन भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के अध्यक्ष एवं संयुक्त निर्देशक (शिक्षा) भ्राता डॉ. एन.एन. गोस्वामी जी ने किया । इसके अलावा इसी विभाग के अवकाश-प्राप्त मुख्य प्रशासन अधिकारी भ्राता चमनलाल जी एवं सुरक्षा-अधिकारी भ्राता भीमसिंह जी भी उद्घाटन के समय उपस्थित थे । इन अधिकारियों ने प्रदर्शनी की बहुत सराहना की।

बीजापुर—जिला शिक्षक ट्रेनिंग कैंप में कार्यक्रम में मंच पर उपस्थित हैं ब्र.कु. अम्बिका, बी.के. चंद्रशेखर, बी.के. प्रकाश ईश्वरीय संदेश देते हुए।

न्यूज़ीलैंड—वलिंग्टन में भारतीय उच्चायुक्त मि. हावसन को ईश्वरीय संदेश देने के पश्चात् परमात्म-स्मृति में खड़े हैं—(बाएं से) मि. हावसन, बी.के. रमेश भाई तथा बी.के. भावना।

न्यूज़ीलैंड—वलिंग्टन के मेयर मि. बुक को ईश्वरीय संदेश एवं सौगात देते हुए ब्रह्माकुमारी भावना जी। साथ में दिखाई दे रहे हैं बी.के. रमेश भाई।

बीड—में केंद्रीय सूचना एवं प्रसारण राज्यमंत्री श्री अजीत पांजा जी को ईश्वरीय सौगात देते हुए लता बहिन।

शुजालपुर—सेवाकेंद्र के दशाब्दी समारोह का उद्घाटन करते हुए भ्राता बी.के. ओमप्रकाश जी।

किशमु—कैथोलिक चर्च की सिस्टर कैथलीन मेडिकल साइन्टीफिक कांफ्रेंस के अवसर पर बी.के. प्रतिमा बहिन के साथ।

नैरोबी—४५ दिन के सर्विस कार्यक्रम के समापन समारोह में दादी जानकी जी मुख्य अतिथियों के साथ विराजमान है। ब्र.कु. वेदान्ती जी प्रवचन करते हुए।

भावनगर—'बाल संस्कार घडतर शिविर' के अवसर पर बच्चे बहिनों के साथ भोजन करते हुए।

गोहाटी 'सर्व के सहयोग से श्रेष्ठ संसार' सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए अनिरुद्ध सिन्हा चौधरी जी, आसाम राज्य के मंत्री।

जगदीश चन्द्र हसीजा, मुख्य सम्पादक, ब्र.कु. आत्म प्रकाश, सम्पादक, ९/१९ कृष्णानगर, दिल्ली द्वारा सम्पादन तथा ओमशांति प्रेस, कृष्णानगर, देहली-५१ से छपवाया । Regd No. 10563/65-D, (E)—70